www.faithbook.in

Faithbook™
ACTIVITIES BEYOND BOOK

7th FEB 2021
Issue 10

BOOK 022

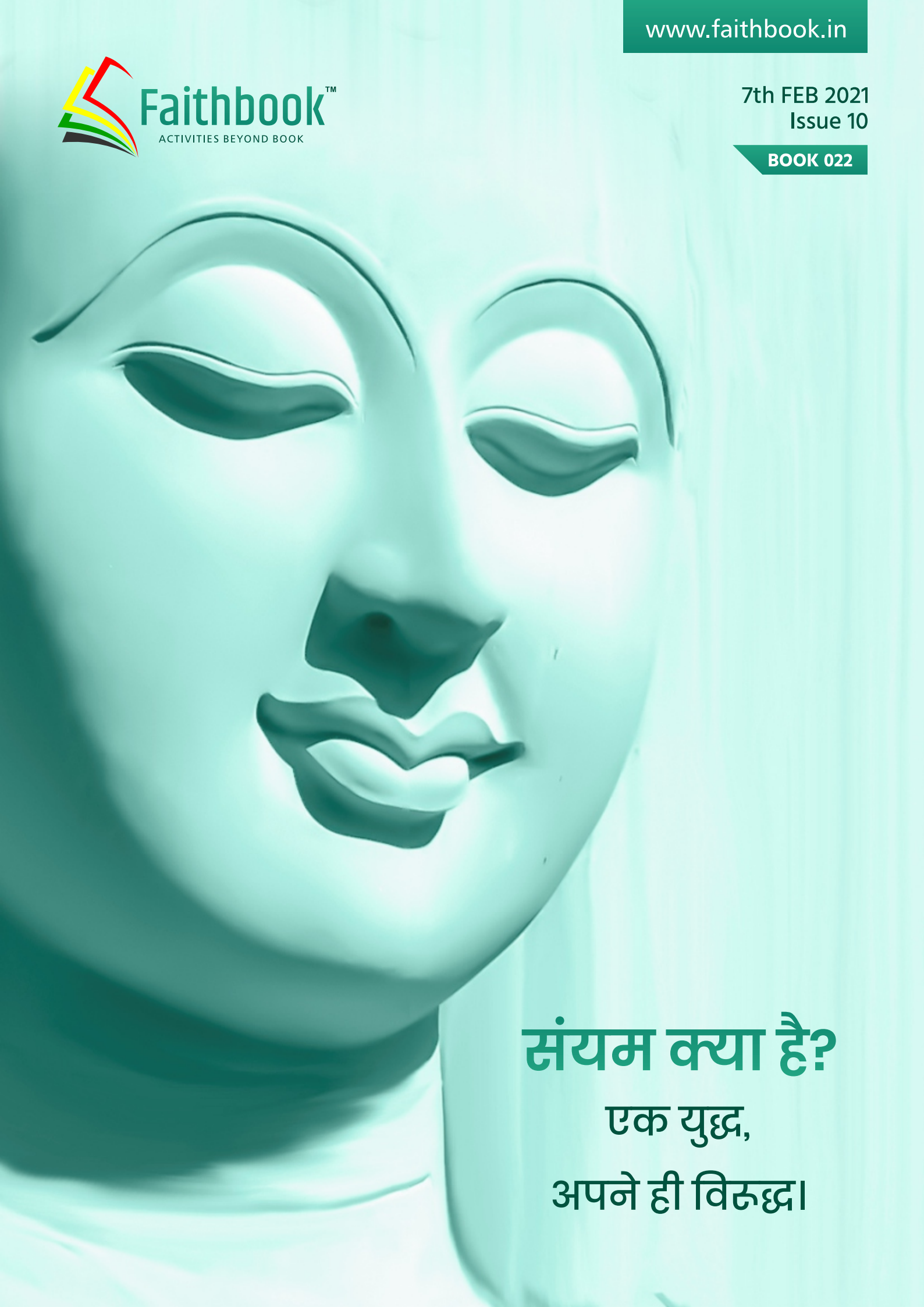

संयम क्या है?

एक युद्ध,
अपने ही विरुद्ध।

॥ वंदामि जिणे चउव्वीसं ॥
॥ पूज्याचार्य श्री प्रेम-भुवनभानु-जयघोष-राजेन्द्र-जयसुंदरसूरि सद्गुरुभ्यो नमः ॥

प्रेरणा : पूज्य मुनिराज श्री युगंधर विजयजी म.सा. के शिष्य
पूज्य मुनिराज श्री शंत्रुजय विजयजी म.सा. के शिष्य
पूज्य मुनि श्री धनंजय विजयजी म.सा.

संपादक : नरेंद्र गांधी, संकेत गांधी

Team Faithbook
शुभ शाह, विकास शाह, केविन मेहता, विराज गांधी, नमन शाह

प्रकाशक : शौर्य शांति ट्रस्ट
C/O विपुलभाई झवेरी
VEER JEWELLERS, Room No. 10/11/12, 2nd Floor, Saraf Primeses Bldg., Khau Gully Corner, 15/19 1st Agyari Lane, Zaveri Bazar, Mumbai – 400003 (Time : 2pm to 7pm)
Mobile – 9820393519

संकेत गांधी – 76201 60095

Faithbook : 81810 36036 contact@faithbook.in

सम्यक् समझ का सुकृत

सादर प्रणाम,

जिनशासन में विद्वद्वर्यो ने 'सम्यक् समझ' का सुंदर अर्थ विविध रुप से बताया है। कहते है कि 'सम्यक् समझ' यानी 'योग्य-अयोग्य का विवेक', 'गुण-दोष के लाभ-नुकसान का अंदाज़ा', 'सुख-दुख कि वास्तविक व्याख्या', 'पुण्य-पाप की ताकत का अंदाज़ा'। इन सभी का समावेश 'सम्यक समझ' में होता है।

लेखन-प्रवचन के माध्यम से यह समझ हम सब तक पहुंचाने का अलौकिक कार्य सदियों से श्रमण-श्रमणी भगवंत करते रहे है। Faithbook का यह Knowledge Book भी उसी दिशा में कदम बढ़ाते हुए हम सभी की 'सम्यक् समझ' में अभिवृद्धि करें यह शुभाभिलाषा !

– नरेंद्र गांधी, संकेत गांधी

INDEX

फर्ज अदा करें वरना कर्ज चढ़ जाएगा। 01
पू. आ. श्री अभयशेखर सूरिजी म.सा.

मैं एकलवीर एकलव्य 06
पू. आ. श्री आत्मदर्शन सूरिजी म.सा.

Everything is Online, We are Offline 4.0 10
पू. मु. श्री निर्मोहसुंदर विजयजी म.सा.

आत्मीयता की संवेदना 13
प्रियम्

शिकायत नहीं किन्तु सक्रीयता 16
पू. मु. श्री धनंजय विजयजी म.सा.

चल मेरे दोस्त! थोड़ा सा झुक जाते है... 20
पू. मु. श्री तीर्थबोधि विजयजी म.सा.

घर में किसे आमंत्रण देना है? समृद्धि? सफलता? या स्नेह? 22
पू. मु. श्री कृपाशेखर विजयजी म.सा.

Temper : A Terror – 9 24
पू. मु. श्री शीलगुण विजयजी म.सा.

प्रभु के वरसीदान का महिमा 28
जैन प्रोफेसर तन्मयभाई एल. शाह

FaithbookOnline

You can Read our Faithbook Knowledge Book in English & Hindi on our website's blog Visit : www.faithbook.in

प्रतिकार

फर्ज अदा करें वरना कर्ज चढ़ जाएगा।

पूज्य आचार्य श्री अभयशेखर सूरिजी म.सा.

पिछले लेख के अंतर्गत आखिर में यह प्रश्न किया गया था कि नौकरी करनेवालों की नीति-प्रामाणिकता क्या होती है?

इसका उत्तर यह है कि उसको धनचोरी, समय-चोरी, कामचोरी, दिलचोरी और माहितीचोरी... इस प्रकार की चोरी को टालना चाहिये। यह पांचों को हम क्रमशः समझेंगे।

1. धनचोरी :

नौकरों के द्वारा धनचोरी अनेक प्रकार से की जाती है। जैसे कि, सेठ के गल्ले आदि से पैसे चुराना। दुकान के माल-सामान के देने और लेने में, बेचने में अपना कमीशन रखना।

सेठ की कंपनी के नाम से प्रवास करते समय सेकंड क्लास या बस द्वारा प्रवास करने पर भी, फर्स्टक्लास का या टेक्सी का किराया लेना... सामान्य खर्चे से खाने पर भी फाईवस्टार होटेल का चार्ज लेना। कंपनी की और से Travel Allowance, Stay Allowance, Food Allowance, House Rent... इत्यादि जो भी लाभ मिलते है। उसमें हकीकत से ज्यादा रकम लेना... उज्ज्वल भविष्य चाहनेवाले को इन सभी धनचोरी को टालना चाहिये।

2. समयचोरी :

नौकरी का जो टाइम तय किया गया हो, उससे देरी से पहुँचना... जल्दी निकल जाना... Working Hours में मोबाईल पर बातें करते रहना। ऑफिस टाइम के दरमियान बाहर चक्कर मारना... घर के

काम निपटाना... खुद का कोई दूसरा Side Business हो तो उसका काम करना... ऐसा सब करके ऑफिस के कामों को टाल देना... और फिर वह काम पूरा करने के लिए ओवरटाइम करके उसका ज्यादा पगार लेना। बिनजरूरी छुट्टियाँ लेना... भविष्य दरिद्रतामय बनाना हो तो ऐसी सारी समयचोरी से दूर रहना चाहिये।

3. कामचोरी :

जितने समय में जितना काम करना संभव हो, उससे कम काम करना... काम ना करने के तरह-तरह के बहाने बनाना... अपने हिस्से का काम दूसरों पर डाल देना... ऊपर बताया वैसे, ऑफिस के काम के समय पर अपने काम करना... ऑफिस के काम से बाहर जाना हो... 2 घंटे में काम पूरा हो जाने पर भी, तीन घंटे बताकर, एक घंटा ऑफिस का काम कम करना। भविष्य में Employee ना रहकर Employer बनना हो तो ऐसी कामचोरी नहीं करनी चाहिये।

4. दिलचोरी :

दिल देकर काम ना करना... काम सही से ना करना... ऊपर ऊपर से जैसे-तैसे काम करना। अपनी काबिलीयत का पूरा उपयोग ना करना... काम को अपना समझकर ना करना... यह सब दिलचोरी है। यह भी अनीति का ही प्रकार होने से, उसे टालना चाहिये।

5. माहितीचोरी :

आपकी कंपनी में किस तरह माल बनता है? फलाना Product के घटक (Material) क्या है? आपकी कंपनी कहाँ से माल लेती है? कहाँ माल सप्लाई करती है? वगैरह गुप्त माहिती को किसी अन्य व्यापारी के लाख रुपये देने की लालच दिखाने पर उसे दे देना... यह सभी माहिती-चोरी है। यह चोरी भी प्रबल अंतरायकर्म खड़े करती है। इसलिए यह त्याज्य है। ऐसी अन्य भी किसी तरह की चोरी हो तो उसे भी त्याज्य समझना चाहिये।

महामंत्री वस्तुपाल-तेजपाल की बात आती है।

वे दोनों भाई अपनी प्रज्ञा और प्रतिभा के अनुरूप नौकरी की तलाश में निकले है। एक राजा ने अपनी राज्यसभा में बुलवाया। पान का बीड़ा देकर बात का प्रारंभ किया।

इन दोनों की कार्यकुशलता और कार्यनिष्ठा को जानकर खुश हुआ। फिर पगार की बात आयी। 1-1 लाख सैनिक को जितना पगार देते हो उतना हम दोनों को देना होगा... दो लाख सैनिकों के जितना पगार! राजा का दिल नहीं माना।

फिर दूसरे राज्य में गये। वहाँ के राजा को इन दोनों भाइयों को इतना पगार देने में फायदा दिखा, इसलिए दोनों को रख लिया। हमारी वफादारी प्रथम देव-गुरु-धर्म के प्रति रहेगी... और चौथे क्रम पर आपके प्रति रहेगी। राजा समझता था कि, जो अपने देव-गुरु-धर्म के वफादार रहेगा वह मेरा भी वफादार ही रहेगा। जो अपने देव

आदि के प्रति भी बेवफा बन सकता है, वो तो किसके प्रति बेवफाई नहीं करेगा? यह शर्त कबूल करके भी राजा ने दोनों को रख लिया।

एक-एक दिन करते करते छः महीने बीत गये। राजा ने अभी भी कोई काम बताया नहीं था। इसलिए दोनों भाई राजा को कहते है, हमें काम दीजिये। बिना काम के पगार लेना तो बहुत बड़ी अनीति है। ऐसा पगार हमें हजम नहीं होगा। और हमारे भविष्य को तो बिलकुल अंधकारमय ही बना देगा। यह तो कामचोरी कहलायेगी। जो हमें कबूल नहीं है।

तब राजा ने कहाँ, आपके योग्य काम ही आपको बता सकते है। मामूली काम आपको नहीं सौंप सकते। इसलिए आज तक काम नहीं बताया है। पर अब ऐसा काम उपस्थित हुआ है, जो आपको बताता हूँ... फलाने राजा पर विजय प्राप्त करना है।

राजा ने उसी राजा का नाम दिया, जिनके पास वस्तुपाल-तेजपाल पहले गये थे। थोड़े लश्कर को लेकर निकल पड़े। राजा को हराया। पर मार नहीं डाला... और कहाँ कि, 'आपके पान का बीड़ा खाया था। इसलिए आपको नहीं मारते है। पर आपका दो लाख सैनिकों का लश्कर कहाँ गया? उन्होंने आपको जिताया नहीं?

बात यह है! नियत किया गया पगार लेना - पर नियत किया गया काम ना करना, यह भी एक प्रकार की चोरी है... यह भी अनीति है।

मुझे पूना के एक एन्जीनीयर युवक का खयाल है।

कंपनी के काम से उसे बार-बार अलग-अलग स्थानों पर जाना होता है। कंपनी का Food Allowance देने का धारा है। पर वो चुस्त जैन श्रावक है। घर से ही खाना लेकर जाता है। बाहर का कुछ भी नहीं खाता है। तो कंपनी से Food Allowance का एक भी रुपया नहीं लेता है। उसके ऊपरी अधिकारी भी उसको कहते है कि, यह तो तेरे हक का है। तू क्यों नहीं लेता है? पर उसका जवाब स्पष्ट है : भोजन के लिए मैंने खर्चा किया ही नहीं है तो उस खर्चे का पैसा कैसे ले सकता हूँ? साल के तकरीबन दो लाख रुपये वह छोड़ देता है।

एक अन्य पार्टी ने उसे ऑफर की, की तेरी कंपनी का जो Product तू संभालता है, उसका मेन्यू-फेकचरींग युनिट हम शुरु करते है... मेरा Investment... तूझे हफ्ते में 2-3 घंटे का Guidance देना होगा। तेरे हिस्से के, साल में सात से आठ लाख मिलेंगे।

पर, इस युवा का सत्व! 'यह तो मेरी कंपनी के साथ Cheating है...' ऐसा कहकर इस ऑफर को ठुकरा दिया। याद रहे... उसने नया घर खरीदा है। बैंक के होम लोन के हफ्ते अभी तक पूरे नहीं हुए है। और फिर भी ऐसी खुमारी?

लगभग 40 वर्ष पहले हमारा चौमासा कच्छ-भुज में था। उस समय वहाँ की देना बेंक की शाखा के

Next to Manager की पोस्ट पर हमारे एक महात्मा के सगे भाई थे। उस समय उनकी पगार 4,000 रुपये की थी। उनकी पोस्ट के हिसाब से विशेष जाँच किए बिना भी एक लाख रुपये तक की लोन मंजूर करवाने का उनको अधिकार था। कोई ऐसी कमजोर और अधूरे दस्तावेजवाली व्यक्ति ऐसी ऑफर देती थी कि, हमारी लाख रुपये की लोन पास कर दो तो, आपको 4-5 हजार रुपये देंगे। 'यह बैंक के साथ धोखाधड़ी है' ऐसा कहकर वे हिम्मत से ऐसी ऑफरों को नकार देते थे... वे कहते थे कि, 'बैंक मुझे बहुत कुछ देती है।' फिर मेरे चार- पाँच हजार रुपयों के लिए बैंक के लाख रुपये डूब जाये, ऐसा करने की मुझे क्या जरूरत है?

कुदरत ने उनकी प्रामाणिकता की कैसी कदर करी थी। एक बार उन्होंने मुझसे कहाँ था कि, मेरे संतोष का प्रतिघोष मेरे परिवार पर पड़ा है। मेरी श्राविका साडी या किसी भी चीज की कभी भी माँग नहीं करती है। मेरे संतानों की भी, कभी भी कोई Demand नहीं होती है। मनोरंजन की या स्पोर्ट्स की चीजों की भी नहीं.... इसीलिए, मेरी तो 4,000 में से भी अच्छी खासी बचत हो जाती है...

पैसे से ज्यादा प्रामाणिकता को ज्यादा मूल्यवान समझने वाले ऐसे अन्य भी अनेक सत्वशील पुण्यशाली नरवीर नजर के सामने है।

उज्ज्वल भविष्य की चाहना करनेवालों को अनीति की लालच को छोड़ना चाहिये। **श्री संतिकरं स्तोत्र के रचयिता श्री मुनिसुंदरसूरि महाराजा ने श्री अध्यात्मकल्पद्रुम ग्रंथ** में हम साधुओं के लिए एक बात लिखी है, जिसका हम विचार करेंगे। यह ग्रंथ के **13वे यति शिक्षो-पदेशाधिकार** में उन्होंने बहुत सख्त बातें लिखी है। संयम का स्वीकार करने के बाद, शक्ति होने पर भी, स्वाध्याय-तप-त्याग-वेयावच्च, संयम-पालन आदि में जो प्रमादी बन जाते है, ज्यादा गड़बड़ी करते है, ऐसे शिथिल साधु को संबोधित करते हुए उन्होंने लिखा है कि, यहाँ पर प्रमाद का सेवन करने में मिलनेवाला सुख समुद्र के जितना है। यहाँ प्रमादजन्य सुख जलबिंदु समान है, पर प्रमादजन्य कर्मो के कारण परलोक में आनेवाला दुःख समुद्र जितना है। तुझे भरुच का भैंसा बनना पड़ेगा... तेली के वहां तेल निकालनेवाला बैल बनना पड़ेगा... वगैरह...

पूज्यश्री बताते है कि, श्रावक-चाचा-मामा आदि किसी भी तरह के संबंध के बिना तेरी अनुकूल गोचरी, पानी, वसति-वस्त्र-पात्रा-दवाईयाँ वंदन आदि द्वारा जो भक्ति करते है, वह एकमात्र तेरे संयम के नाम पर। यदि तू उत्तम संयम पालेगा तो तू तर जायेगा, परंतु संयम के नाम पर यह सब लेने के बाद, संयमपालन में तूने गड़बड़ी की तो यह सब तेरे सर पर कर्ज बन जानेवाला है। पठानी ब्याज के साथ यह सब चुकाने के लिए तुझे भरुच का भैंसा बनना पड़ेगा।

नौकरी करनेवाले हर किसी को यह बातें बराबर समझनी चाहिए। धनचोरी-कामचोरी आदि करने से यहाँ मिलनेवाला सुख जलबिंदु समान है। जबकि यह सब टालकर व्यवस्थित योग्य पगार के योग्य काम करके जो वफादारी के नीति के प्रभाव से परलोक में मिलनेवाला सुख तेरी कल्पना के बाहर होगा। धनचोरी आदि के यहाँ मिलनेवाले बूंद समान सुख के सामने, वो सारी अनीतियां से किए गये कर्मों के कारण परलोक में मिलनेवाला दुःख तेरी कल्पना के बाहर होगा।

फर्ज अदा करें वरना कर्ज चढ़ जाएगा।

तय किए गए वेतन आदि के बदले में, जो जितना काम कर देने का तय किया गया हो, वह सेवा, उतने काम को नजर में रखकर सेठ (या कंपनी) तुझे पगार आदि मिलता है, पर वह काम करने में यदि तू गड़बड़ करता है तो, पगार के बदले में योग्य काम रूप, जरूरी माल तू नहीं दे रहा है। इसलिए यह अनीति है। तूने दिये हुए काम रूप माल से जितना पगार आदि तूने ज्यादा लिया है, यह सब तेरे सर पर कर्ज रूप बन गया है, जो भविष्य में पठानी ब्याज के साथ - आने, पाई, सिक्के तेरे पास से सबकुछ वसूल होनेवाला है। उसके लिए शायद तुझे गुलामी प्रथा के गुलाम के जैसा गुलाम भी बनना पड़ सकता है। तेरे पास से काली मजदूरी कराने के बाद एक पैसा भी ना देकर, पूर्व में (इस जन्म में) तूने की हुई गड़बड़ी की वसूल करेंगे... या तेली के वहां बैल बनायेंगे... Nothing is Impossible.

वर्तमान में ऐसी सारी अवस्थाओं में से गुजर रहे दुःखी जीवों को देखकर, हर एक विचारक को हर एक प्रकार की अनीति को टालना चाहिए। फिर चाहे वह व्यापारी हो या चाहे नौकरशाह हो।

यह विचार को ज्यादा व्यापक फलक से विस्तृत करेंगे तो...

मान लो कि आप श्री संघ के ट्रस्टी हो... श्री संघ आपको ट्रस्टी के रूप में मान-सन्मान देता है... हर जगह आपको आगे करता है। हर जगह आपका नाम बिना चढ़ावे के लिखता है। यह सब मर्तबा पाकर, फिर यदि आप ट्रस्टी के पद से आपकी फर्ज अदा ना करते हो तो, यह सब आपके सिर पर कर्ज के रूप में चढ़ेगा। और भविष्य में आने-पाई-सिक्के आपको सब चुकाना पड़ेगा।

सुज्ञ-बुद्धिमान व्यक्ति ने ऐसा हर चीजों में समझना चाहिए।

मैं एकलवीर एकलव्य

पूज्य आचार्य श्री आत्मदर्शन सूरिजी म.सा.

द्रोणाचार्य की पाठशाला में अलग-अलग राज-कुमारों ने युद्धकला आदि अनेक प्रकार की विद्याएं प्राप्त की थी। अमुक्त और करमुक्त ऐसे शस्त्रों की कला सभी राजकुमारों ने सीखी थी। भीम और दुर्योधन गदा युद्ध में प्रवीण हुए थे। महापराक्रमी अर्जुन अस्त्र और शस्त्र के उपरांत राधावेध जैसी कला में भी पारंगत हुआ था। कर्ण ने भी बहुत सारी कलायें सीखी थी।

द्रोणाचार्य को भी अपने से सवाई धनुर्धर बन जाये वैसा अर्जुन मिल जाने पर खुशी का ठिकाना नहीं था। उन्होंने अपनी तमाम शक्ति को उसके पीछे लगाने का संकल्प कर दिया था। अर्जुन की ग्रहणशक्ति से भी बढ़कर उसकी गुरुभक्ति से प्रभावित होकर द्रोणाचार्य उससे तैयार करने के लिए अतिशय उत्साहित हो गए थे। अर्जुन भी विश्वश्रेष्ठ धनुर्धर बन गया था।

एक दिन की बात है। विद्यादान की छुट्टी के कारण अर्जुन अपने धनुष को लेकर पुष्पकरंडक नाम के उद्यान में क्रीड़ा करने के लिए गया। वहाँ अनेकविध क्रीड़ाओं करते-करते स्वतंत्र विहार कर रहा था। आगे जाते हुए एक दृश्य को देखकर उसके आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रही थी। उसने एक ऐसे कुत्ते को देखा कि जिसके मुंह को बाणों से भर दिया गया था।

अर्जुन सोचने लगा कि भोंकने की आवाज से परेशान करनेवाले ने इस कुत्ते को किसने इस तरह तीर मारकर चुप कर दिया होगा? यह तो गजब की धनुर्कला है। ऐसा अद्वितीय धनुर्धर इस उपवन में और कौन हो सकता है? आगे चलते हुए उसने एक युवक को देखा। उसके हाथ में धनुष आदि को देखकर उसने अनुमान कर लिया कि उस कुत्ते को चुप करनेवाला यही व्यक्ति लगता है।

भद्र! तुम कौन हो? तुम्हारे विद्यागुरु कौन है? तुम कहाँ रहते हो?

तब मैंने जवाब दिया, यहीं इस उपवन के बाजू में रुद्रपल्ली नाम का एक गाँव है। उसमें हिरण्य-धनुष नाम का एक पल्लीपति रहता है। उनका

EKALAVYA

पुत्र में एकलव्य हूँ। शस्त्रविद्या में निपुण अजोड़ धनुर्धारी अर्जुन जिनका शिष्य है, वे द्रोणाचार्य मेरे गुरु है।

मेरे यह वचन सुनकर अर्जुन उदास बन गया वो वहाँ से वापस द्रोणाचार्य के पास आया और खिन्न वदन से गुरु को नमस्कार किया। अपने प्रिय शिष्य अर्जुन का मुख निस्तेज देखकर पूछा।

वत्स! आज तू इतना ज्यादा उदास क्यों दिख रहा है। क्या किसी ने तेरा अपमान किया है?

अर्जुन ने कहाँ : गुरुदेव आपके अलावा मेरा तिरस्कार करने को कौन समर्थ है? सिंह का पराभव सिंह के अलावा कौन कर सकता है? परंतु आपका वचन मिथ्या साबित हुआ है। क्योंकि आपने तो मुझसे भी कई ज्यादा बढ़कर एक ऐसा शिष्य तैयार किया है, तो आपने मुझे अजोड़ धनुर्धर बनाने का जो वचन दिया था उसका क्या अर्थ है? अर्जुन ने विस्तार से सारी बात बताई तब द्रोणाचार्य ने स्पष्टता करते हुए कहा, 'वत्स! तुझसे बढ़कर मेरा कोई शिष्य नहीं है। और तू जो बातें कर रहा है, उसे तो मैं पहचानता भी नहीं हूँ।

अर्जुन द्रोणाचार्य को उस उद्यान की ओर ले गया। वे दोनों एक जगह पर छुपकर देख रहे थे। उस समय मैं (एकलव्य) मेरी अपनी अनेकविध निशानेबाजी खेल रहा था। और अकेला ही बोलता रहता था। गुरुजी! अब मैं क्या करुं? आप ही बताओ। इस प्रकार धनुष को धारण करुं? इस प्रकार से लक्ष्य की और तीर चलाऊँ? क्या करुं? आप ही मेरे सर्वस्व हो। वंदे द्रौणं महागुरु... इत्यादि।

मेरे गुरुदेव (द्रोण) और अर्जुन तो यह दृश्य देखकर स्तब्ध रह गए।

अर्जुन ने गुरुदेव को धीरे से कहा, कि देखिए, आप ही उसके गुरु हो ना?

मैं तो उनको देखते ही उनकी तरफ दौड़ा।

गुरुदेव पधारो... पधारो... मेरे प्राण, मेरे सर्वस्व... हर्षाश्रु से मैं द्रोण-गुरु के चरणों का प्रक्षालन करने लगा।

गुरु के प्रति का असाधारण बहुमान देखकर अर्जुन तो दंग रह गया वह मुझे नम्र अदा से - अनिमेष नजरों से देखता रहा।

आश्चर्यचकित हुए द्रोणाचार्य ने मेरी पीठ थप-थपायी और पूछा,

'वत्स! यह विद्या तू कहाँ से सीखा? तेरे गुरु कौन है?'

तब मैंने हँसते-हँसते कहाँ, 'गुरुदेव! आपने ही तो मुझे यह विद्या सिखायी है।'

गुरुद्रौण बोले, 'वत्स! तुम्हें धनुर्विद्या का शिक्षण मैंने कैसे दिया? वही मुझे समझ में नहीं आता है।

मैंने कहा, 'गुरुदेव! जब कौरव-पांडव आपके पास धनुर्विद्या सिख रहे थे, उस समय मैंने आपको सविनय प्रार्थना की थी कि, गुरुदेव! आप मुझे भी धनुर्विद्या का अभ्यास कराइये। उस समय में जाति से भील होने के कारण, आपने मुझे धनुर्विद्या सिखाने से मना कर दिया। मैं निराश हो गया। परंतु मैंने मन ही मन आपको ही गुरु के रूप में हृदय में स्थान दे दिया। मैंने सुंदर-सी एक कुटिया बनायी। और आपकी मिट्टी की प्रतिमा बनायी। कुटिया में उसका स्थापन किया। मेरे कलेजे में और कुटीर में, दोनों जगह आपका स्थान है। जिसे कोई भी विचलित नहीं कर सकता है। बस, आपको ही नजर के समक्ष रखकर आपकी कृपा और मेरी श्रद्धा से स्वत: अभ्यास करता हूँ।

अजोड़ गुरुभक्ति और अविरत पुरुषार्थ दोनों का जब सुयोग प्राप्त होता है तब, कल्पना बाहर के लाभ होते हैं।

(पदार्थ का हकीकत में सामने होना यह – Objective Reality.

पदार्थ का कल्पना सृष्टि में सर्जन करना यह – Ideal Reality.

दोनों ही reality से लक्ष्य को सिद्ध कर सकते हैं। कभी-कभी objective से भी ideal reality ज्यादा फल दे सकती है। जैसी जिसकी श्रद्धा!

अर्जुन को तो प्रत्यक्ष द्रौण मिले थे। एकलव्य को कल्पना के द्रौण मिले थे। एकलव्य अर्जुन से आगे निकल गया।

सच्चे भूत से जितना डर लगता है, उतना ही डर वृक्ष के साये में अथवा संध्या के समय पर, दूर से वृक्ष के ठूंठें में भूत की कल्पना से लगता है। दोनों में हार्टफैल होने की समान संभावना है।

कोरोना से भी शायद कोरोना के ड़र से ज्यादा लोग मर गए होंगे।

कोरोना: यह Objective Reality है और कोरोना की कल्पना ideal reality है। दोनों से लोग भय के भयानक साये में जीते हैं।)

मुझे द्रौणाचार्य ने शिष्य के रूप में कभी भी स्वीकार नहीं किया है। केवल एक पक्षी तरह से मैंने द्रौण को गुरु के रूप में स्वीकारा है। उनकी गुरुमूर्ति के रूप में प्रतिष्ठा की है। उस मूर्ति में मुझे जीवंत गुरु दिखते थे। और उनके पास से बाणविद्या के लिए निरंतर प्रेरणा ले रहा हूं।

इस तरह करते-करते ही मैं सवाई गुरुभक्त अर्जुन जैसा बन गया था। और उसी के कारण, जब गुरु द्रौणने, सवाई धनुर्धर अर्जुन बनने से रोकने के लिए मेरे पास गुरुदक्षिणा में दाहिने हाथ का अंगूठा गुरुदक्षिणा के रूप में माँग लिया था। तब हर्ष से गद्-गदित होकर मैंने कहाँ, "ओ उपकारी गुरुदेव! अंगूठा ही क्यूं? पूरा सिर काटकर गुरुदक्षिणा में दे दूँ तो भी मैं आपके ऋण से मुक्त नहीं हो

पाऊँगा। आदेश किजिए!"

यह तन विष की वेलड़ी, गुरु अमृत की खान।
शीश दिए जो गुरु मिले, तो भी सस्ता जान।।

...और खच्च करके क्षण का भी विचार किए बिना मैंने दाहिने हाथ का अंगूठा काटकर दे दिया। धरती पर टप...टप...टप... खून टपकने लगा।

उस समय आकाशस्थ देवों ने गुरुद्रौण को शर्म... शर्म... की पुकार से सम्मानित (?) किया और मेरे पर पुष्पों की वृष्टि करके मेरा सम्मान किया।।

कीचड़ में सिर्फ कीड़े ही पैदा नहीं होते हैं, कमल भी उसी में ही पैदा होता है। उसी तरह भील ऐसे मुझमें भी गुरु के प्रति का यहाँ तक का समर्पणभाव है, कि जिसमें शीश उतारकर देने में भी कोई हिचकिचाहट नहीं है। जो उच्च कुल के खून में भी शायद हर जगह देखने को नहीं मिलेगा...!

देवों के द्वारा हुई पुष्पवृष्टि को देखकर गुरुद्रौण का मस्तक लज्जा के कारण झुक गया। और भारी आदर और वात्सल्यपूर्वक मुझे गले लगा लिया। और कहाँ, "वत्स! मुझे बहुत कठिन फर्ज निभानी पड़ रही है, और तुझे इस मुश्किल कसौटी से पार उतारना पड़ा है।

धन्य है तुझे!... मैं तुझे अंतःकरण से आशीर्वाद देता हूँ कि... बिना अंगूठे के भी तू तेरी सिद्धहस्त धनुषकला में पारंगत बना रहेगा।

याद रहे, 'एकलव्य वास्तव में एकलवीर था' ऐसा आज भी जगत मुझे याद करता है। उसमें गुरुभक्ति और गुरुकृपा ही महत्व की है।

शिष्य हृदय में गुरु का स्थान हो वह भाग्यशाली है,

परंतु गुरु के हृदय में शिष्य का स्थान हो वह परम सौभाग्यशाली है।

अब आप किसकी सराहना करोगे?
अर्जुन की या एकलव्य की...

Everything is Online, We are Offline 4.0

पूज्य मुनिराज श्री निर्मोहसुंदर विजयजी म.सा.

गत अंक में हमने इसी मंच से ऐलान किया था कि, आनेवाला कल बहुत ही खतरनाक होने जा रहा है, जिसमें हमारा विकास के पीछे का पागलपन जिम्मेदार होगा।

आज इसी बात की जरा विस्तार से चर्चा कर लेते है। रिलायन्स ने कुछ दिनों पूर्व में एक घोषणा की थी, जरा गौर से उन घोषणा के शब्दों को सुना हो तो वह इस प्रकार थी 'भविष्य का भारत देश मोबाईल नेटवर्क में क्रांति करने जा रहा है। भावि में 5G नेटवर्क से आपके मोबाईल लैस होंगे।'

ऐसी ही घोषणा वर्तमान की केन्द्र सरकार ने भी कुछ महिनें पहले की थी। वाई-फाई क्रांति से देश को विकास के सपनें दिखानेवाली सरकार को हमारा सिर्फ छोटा सा प्रश्न है कि, 'क्या वाई-फाई क्रांति बिना 5G नेटवर्क के आनेवाली है?' और यदि इसका उत्तर 'ना' में है तो दूसरा प्रश्न यह है कि, क्या 5G नेटवर्क आरोग्य की दृष्टि से किसी को भी नुकसान पहुंचाए बिना काम करनेवाला है?

दूसरे प्रश्न का उत्तर हम ही दे देते है (क्योंकि, आप का अब नये भारत में प्रवेश हो चुका है, जहाँ न्यायालय की आँखें, मीडिया का मुंह और सरकार के कान, गांधीजी के तीन बंदर की तरह बंद दिख रहे हैं।)

आपने गत साल चाईना के कुछ वीडियोज़ देखे होंगे, जिसमें कोई बुजुर्ग व्यक्ति खड़े-खड़े ही गिर कर मरता हुआ दिखाई दे रहा है या रोड़ के इर्द-गिर्द कुछ लोगों की लाशें बिखरी हुई दिखाई दे रही है। आपको ये सारे वीडियोज़, कोरोना की भयानक असर कैसी हो रही है या होगी, उसका आकलन करने के लिए बताये गये थे। हकीकत में वो कोरोना का कहर नहीं था, 5G नेटवर्क का फुल फ्रीकवेन्सी के साथ किया गया प्रयोग (Experiment) था, ऐसा हमारी जानकारी में आया है।

आप लोगों को डराकर घर में बंद रखने के साथ-साथ लोकडाउन के दौरान 5G नेटवर्क की जाल बिछाने का कार्य भी भारत के शहरों में चालू कर दिया गया था।

कई स्थानों पर रात्रि कर्फ्यू के दौरान 5G नेटवर्क स्थापित करने का कार्य चालू था, ऐसा भी सुनने में आया है। (इसी हेतु से रात्रि कर्फ्यू लगाया गया हो प्रायः इसकी संभावना भी प्रबल है।)

आपको लगेगा कि, कोरोना से 5G का क्या रिश्ता है? कोरोना के नाम से जो डर बढ़ाना था वो डर बढाने में 5G बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ है। चाईना में 5G नेटवर्क का प्रयोग बंद करने के तुरंत बाद मृत्यु दर कम हो गया। इन सारी जानकारियों के आधार पर ब्रिटेन इत्यादि में आक्रोशित जनता 5G के टावरों को सुपुर्द-ए-खाक कर रही है (यानी जला-जलाकर भस्म कर रही है।)

जिओ-मुकेश अंबाणी के द्वारा गुगल के साथ पार्टनरशीप (साझेदारी) इसी हेतु से की गई है। भारत राष्ट्र में 5G को तेजी से फैलाने के लिए की गई यह साझेदारी आखिर कितने भयानक दुष्परिणाम लानेवाली है, इसका आम जनता को कहाँ पता है? थोड़ी गहराई में जाकर जानते हैं कि 5G का नुक़सान क्या है?

4G में 2.5 गिगाहट्ज़ तक की फ्रीकवेन्सी का उपयोग होता है, मगर 5G में 60 गिगाहट्ज़ की फ्रीकवेन्सी का उपयोग होता है। 10 लाख हट्ज़ का एक मेगाहट्ज़ और एक अरब हट्ज़ का एक गिगाहट्ज़ होता हैं।

जिसके चलते 5G नेटवर्क में डाटा ट्रान्सफर की गति बढ़कर 20 से 25 गुनी हो जाती है। डाटा ट्रान्सफर की गति तेज होने पर हमें बहुत खुशी मिलती है मगर, याद रहे अधिकांश हादसे एक्सप्रेस वे पर ही होते है। तेज गति तेजी से हमें मारने का काम करती है, यह निर्विवाद सत्य है।

5G की सबसे खतरनाक असर यह है कि, उसके भारी रेडिएशन (60 गिगाहट्ज़) के कारण केन्सर के मरीजों की संख्या में भारी बढ़ोतरी होना तय है। 4G का रेडिएशन दीवारों को और हमारे शरीर की चमड़ी को भेदकर आर-पार निकल जाता है, हमारे शरीर में रहता नहीं है मगर 5G के रेडिएशन को हमारा शरीर सोख लेता है, जिसके कारण हमारे शरीर के टेम्परेचर और DNA में परिवर्तन होने की संभावनाएँ बढ़ जाती है। अपने शरीर में यदि इतनी भारी मात्रा में रेडिएशन चला जाये तो केन्सर का मरीज़ बनना निश्चित है।

सूरज की किरणों के दृष्टांत से रेडिएशन के असर को समझने की कोशिश करेंगे।

सूरज की किरणें यदि बिखरी हुई हो तो कागज जला नहीं सकती है मगर वो ही किरणों को यदि

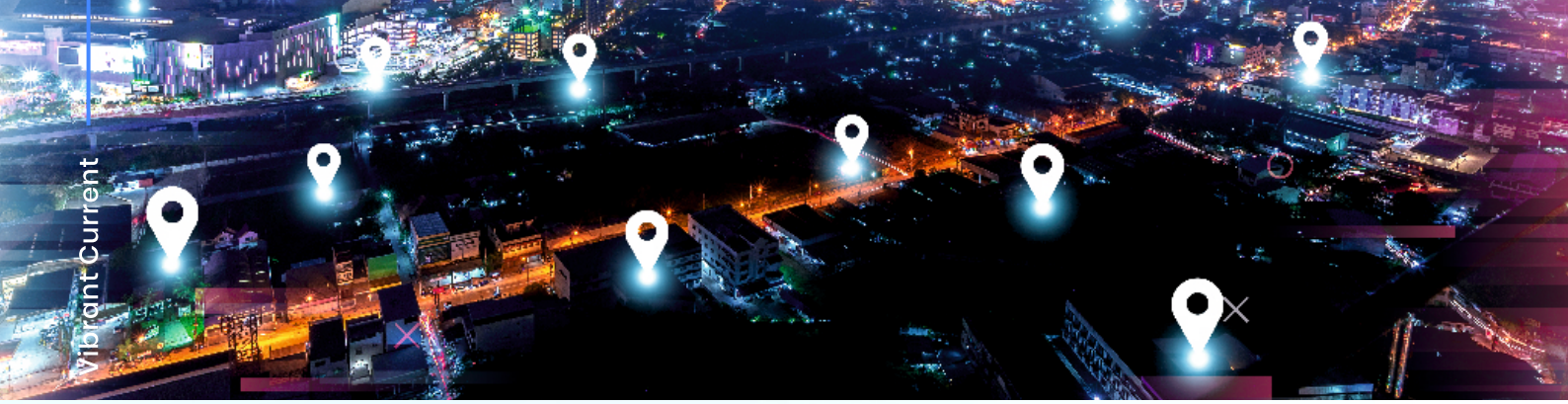

उत्तल के सिसे के माध्यम से एकत्रित किया जाये तो वह किरणें कागज इत्यादि में आग लगा सकती है।

4G तक हम थोड़े-बहुत भी सुरक्षित थे, मगर 5G के रेडिएशन हमारे शरीर के अंदरूनी कोषों को जलाकर भस्म करने की ताकत रखते है और इसी कारण से 5G के टावर भी कम अंतर में लगाने पड़ रहे है, क्योंकि 5G नेटवर्क अपना असीम प्रभाव, सीमित क्षेत्र में ही दिखा सकता है। जैसे सूरज की किरणें एकत्रित होकर सीमितक्षेत्र में रही चीजों को भस्मीभूत कर सकती है, ठीक वैसे ही 5G नेटवर्क का असर समझना चाहिए।

औरंगाबाद के डॉ. विलासजी जगडाले के घर के बाजू में 5G टावर का छोटासा प्रतीकात्मक प्रयोग किए जाने पर, उस एरिया के कई घरों की घड़ियां चलनी बंद हो गई थी और डॉक्टर साहब के पास स्कीन एलर्जी के अत्यधिक मरीज़ आने लगे। डॉ. विलासजी तो खुल्लेआम कह रहे है कि, यदि फुल फ्रिकवेन्सी में 5G नेटवर्क चालू किया गया तो भारत देश की 70 प्रतिशत आबादी चमड़ी के केन्सर से ग्रसित होगी और देखने की बात यह होगी कि हमें नुकशान पहुँचानेवाला शत्रु ही हमें नहीं दिख रहा होगा।

अभी तक होनेवाली नेटवर्क क्रांति से चिड़िया ही गायब हुई है। (बर्ड फ्लु का असली कारण शायद रेडिएशन ना हो?) मगर अब होने जा रही नेटवर्क क्रांति (5G नेटवर्क) से तो शायद इंसान ही गायब हो जायेगा।

मेरी बात आपको हजम ना हो रही हो तो थोड़ी खोज आप भी कर लो। हमारे यहाँ मोबाईल का पूर्णरूप से उपयोग तक सन् 2010 से होने लगा है (खासतौर पर सन् 2016 में जिओ आने के बाद से हुआ है) मगर स्वीडन जैसे देश में मोबाईल क्रांति सन् 1986 से चरम पर थी। उसी स्वीडेन में मोबाईल के रेडिएशन के कारण EHS (इलेक्ट्रो हायपर सेंसीटीवीटी) नामक रोग से पीड़ितो की संख्या सन् 2005 में ढाई लाख से अधिक थी। वे मरीज़ ऐसे थे, जिन्हें किसी के मोबाईल में बजने वाली घण्टी से भी वोमिटींग सेन्सेशन (उल्टीयाँ), चक्कर आने, बेहोश हो जाने जैसी दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा था। कई लोगों को तो अपना घर, अपना शहर छोड़कर जंगलों में रैनबसेरा करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

भारत राष्ट्र में मोबाईल क्रांति, भले ही देरी से हुई है मगर 5G आने के पश्चात् स्वीडेन जैसे हालात खड़े होने में बिल्कुल देरी नहीं लगेगी।

वैसे भी 5G की स्पीड़ अकल्पनीय होगी। डाटा हो या मनुष्य, दोनों को यहाँ से वहाँ, यानी एक फोन से दूसरे फोन में डाटा और एक जनम से दूसरे जनम में मनुष्य को ट्रान्सफर होने में इंतजार नहीं करना पड़ेगा।

(अगले अंक में, 5G के बारे में और भी कुछ बातें आप से शेयर करेंगे, जो आपको जाननी बेहद जरुरी है।)

(हिंदी एवं अंग्रजी दोनों भाषाओं में हमारे पास बहुत महत्त्वपूर्ण लेख 'खतरनाक वैक्सीन' नाम से पड़े है, जिसे भी पढना हो हमें 91665 68636 पर अवश्य सूचित करें।)

आत्मीयता की संवेदना

"प्रियम्"

स्वामित्वाभिमान /

जिसमें कुछ पाने की वृत्ति है या पा लेने का गुमान है।

मैं आपको पूछता हूँ - संघ की सेवा करके हमें चाहिये क्या? नाम, पद, प्रशंसा, वाहवाही, हार-तोरे, यदि हाँ, तो हमें चंदन को जलाकर राख चाहिये होती है। वस्तुपाल जीवन के आखिरी दिन पर जो प्रार्थना करता है, वह यह है।

यन्मयोपार्जितं पुण्यं, जिनशासन सेवया।
जिनशासन सेवैव, तेन मेऽस्तु भवे भवे।।

जिनशासन की सेवा से मैंने जो कुछ भी पुण्य उपार्जन किया हो, उससे मुझे भवोभव जिनशासन-सेवा की प्राप्ति हो।

सेवा के बदले में हमें कुछ चाहिये है, उसका अर्थ यह है कि जो चाहिये वह चीज सेवा से ऊँची है। उसका अर्थ यह है कि सेवा तो तुच्छ है, और वो वस्तु महान है। जिसे सेवा तुच्छ लगती है, वह सेवा कैसे? तो जिसे सेवा के बदले में कुछ वस्तु चाहिये, उसे सेवा किए बिना सेवा का बदला चाहिये होता है। सेवा एक बहाना है। बदना लेने का एक उपाय है। सच्चे भाव के बिना यह सही उपाय भी नहीं है। और दंभ बन जाता है।

जो सेवा हमें मोक्ष दिला सकती हो उसे सौदा, धंधे का माध्यम बना-कर सेवाधर्म की अवगणना करके हम हमारा संसार तो बढ़ा नहीं रहे है? मान लो कि हम उपाश्रय में गये। गुरुदेव के पास खड़े रहे। एक महात्मा को कहाँ, "मेरे लिए कुर्सी ले आइये।" हम कैसे लगेंगे? वहाँ हाजिर लोग क्या कहेंगे? कहेंगे या टूट पड़ेंगे? "यह क्या? आप महात्मा के पास से कुर्सी की अपेक्षा रखते हो?"

मैं आपको पूछता हूँ, संघ की सेवा

के नाम पर जब हमें कुर्सी चाहिये होती है, तब हमारी यही अपेक्षा नहीं है? कि महावीर हमारे लिए कुर्सी ला दे?

संघसंवेदना यदि भीतर में बहने लगेगी, तो हार - यह चप्पल का हार लगेगा। प्रशंसा गाली लगेगी और कुर्सी अग्नि की चिता लगेगी।

वस्तुपाल को 'संघपति' के रुप में नवाजा गया तब उनकी आँखों में आँसू उमड़ पड़े। वे बेचैन हो गये। गुरुदेव को उन्होंने भावावेश में कहाँ, 'मैं संघ का पति? संघ का स्वामी? नंदीसूत्र जैसे आगमों में जिनकी चार नहीं पर चारसौ मुंह से तारीफ की गई है। जो तीर्थंकरों को भी वंदनीय है। जो पंचपरमेष्ठी भगवंतो की खान है, उसका मैं पति? वह कैसे संभव हो सकता है?"

मैं आपको पूछता हूँ। हमारी गलत तारीफ होने पर हमने किसी को रोका? कुत्ते को भी उसकी गली का स्वामित्वाभिमान होता है। उसने मान लिया होता है कि यह मेरी गली है। हमने भी ऐसा न जाने कितनी चीजों में मान लिया है?

तीन प्रकार की बहू होती है।

1. जो सासु की सेवा ही ना करें
2. जो सेठानी बनकर सेवा करें, जैसे साँस की मालकिन हो, यदि सासु को उसकी सेवा की गरज हो, तो उसे उसकी आज्ञा में रहना पड़ेगा। यह ना अच्छा लगे तो सेवा का ख्याल छोड़ना पड़ेगा।
3. जो सेविका बनकर सेवा करें। सेवा भी करें और सासु की आज्ञा में भी रहे। सच्ची सेवा यही होती है।

स्वामित्वाभिमान के मूल में कतृत्वाभिमान होता है।

'मेरा संघ' यह दो तरह से बोल सकते है।

1. **स्वामित्व की संवेदना से**
2. **आत्मीयता की संवेदना से**

स्वामित्व की संवेदना सेठ बनाती है। आत्मीयता की संवेदना दास बनाती है। 'सेठ' इस तरह से सोचेगा कि यह देरासर, उपाश्रय, पेढ़ी आदि मेरा है। यह सब मेरे हिसाब से चलना चाहिये। सभी को मेरी इच्छा के मुताबिक चलना चाहिये। उसमें कुछ भी उन्नीस-बीस होगा तो हरगिज नहीं चलेगा : 'दास' यह सोचेगा कि मुझे इसमें कहीं भी कुछ भी करने का मिल जाये तो मेरा अहोभाग्य!

वस्तुपाल के हृदय में ऐसी संवेदना थी, आत्मीयता की। स्वामित्व की छाया से भी वे भयभीत हो गये

थे। मैं संघ का स्वामी कैसे? यदि मैं गुरुदेव का स्वामी नहीं हूँ, तो देव-गुरु को भी वंदनीय ऐसे संघ का स्वामी मैं कैसे बन सकता हूँ?

हम अंदर संसार भरकर शासन में आ भी गये तो भी शासन द्वारा भी हम हमारे कषायों को पोषने का काम ही करनेवाले है। एक इन्सान मोबाईल से उसकी दुन्यवी वासनाओं को पोषता है, और दूसरी व्यक्ति महावीर से उसकी दुन्यवी वासनाओं को पोषता है। दोनों के लिए है तो दोनों एक साधन ही। एक व्यक्ति स्त्री की लालसा से संसार बढ़ाता है, दूसरी व्यक्ति पद की लालसा से संसार बढ़ाता है। दोनों करते है तो संसार की वृद्धि ही ना?

महावीर यह माध्यम नहीं है, साध्यम् है। जिससे कहीं पहुँचना है, वह महावीर नहीं है। जहाँ पहुँचना है, यह महावीर है। जिनके कंधे पर चढ़-कर कहीं ऊपर जाना है, यह महावीर नहीं है। जिनसे कुछ भी उँचा है ही नहीं यह महावीर है। महावीर का उपयोग नहीं करना है, महावीर की उपासना करनी है। पापी जीव पूरी जिंदगी महावीर का - संघ का - धर्म का लाभ उठाने की जद्दोजहद करता रहता है। और आखिर में सब कुछ पाकर सबकुछ हार जाता है। पुण्यशाली जीव सब कुछ पाकर सिर पर चढ़ाकर-उपासना करके आत्मकल्याण साध लेता है।

वस्तुपाल उपाश्रय में गये है। गुरुदेव का व्याख्यान चल रहा है। अहोभावपूर्वक व्याख्यान सुनते है। व्याख्यान के बाद गुरुदेव को शाता पूछते है। काम-काज पूछते है। उपाश्रय से उल्टे कदम दरवाजे की ओर आ रहे है, और उस समय एक श्रावक वहाँ पतासे की प्रभावना करता है।

मैं आपको पूछता हूँ? पैसे का मूल्य ज्यादा? या परमेश्वर का मूल्य अधिक? जिसके पास पैसा है वो महान? के जिसके पास परमेश्वर है वो महान? जिसके पास परमेश्वर है, पैसा नहीं है, यह यदि छोटा आदमी हो, तो इसका अर्थ यह है कि पैसे से ज्यादा परमेश्वर छोटा है। परमेश्वर नहीं है, पैसा है, यह यदि बड़ा आदमी हो तो इसका अर्थ यह है कि परमेश्वर से ज्यादा पैसा बड़ा है।

मुझे वो झांझणशा सेठ याद आते है, संघ लेकर निकले थे, कर्णावती (अहमदाबाद) आये। राजा ने आमंत्रण दिया, संघ के मुख्य व्यक्ति खाने पर आये। और राजा जैसे राजा को झांझणशा ने कह दिया - हमारा समग्र संघ मुख्य है। यहाँ कोई छोटा है ही नहीं।

संघ के एक भी सभ्य के साथ ऊँची आवाज में बात करना, यह भगवान महावीर के साथ झगड़ा करने जैसा है। संघ की एक भी व्यक्ति के साथ उद्दंडता से बात करना यह भगवान महावीर का तिरस्कार बराबर है। संघ की एक भी व्यक्ति के भाव को तोड़ना यह समवसरण में पैर रखने जाती हुई व्यक्ति को निकाल बाहर करने बराबर है। संघ के परिसर में आयी हुई अन्यधर्मी व्यक्ति के साथ भी असभ्य व्यवहार यह ईन्द्रभूति को गौतमस्वामी बनने से रोकने की चेष्टा है।

महावीर यह माध्यम नहीं है, साध्यम् है।

जिससे कहीं पहुँचना है, वह महावीर नहीं है।
जहाँ पहुँचना है, यह महावीर है।

Vande Shasanam

शिकायत नहीं किन्तु सक्रीयता

पूज्य मुनिराज श्री धनंजय विजयजी म.सा.

अनन्त भवों में भटकते हुए एकत्रित की गई पुण्य-राशी के प्रभाव से लोकोत्तर जिनशासन की प्राप्ति हुई है।

इस अद्भुत जिनशासन की प्राप्ति होने के पश्चात् जीव शासन को सफल करने हेतु पुरुषार्थ नहीं करता तथा मोहराजा को वशीभूत होकर शासन को ही गलत समझने लगता है।

शासन के प्रति निष्ठावान हों, शासन के लिए कुछ कर मिटने की भावनावाले हों तथा सभी के साथ मिलकर श्रद्धाभाव एवं शासनभक्ति से कर्तव्य-परायण होकर शासनोन्नति का कार्य करें !

"Power of Unity" की लेखमाला में...

सद्भाग्य से आशिर्वाद के रूप में प्राप्त हुए प्रभु के इस अत्यन्त तेजस्वी, ओजस्वी शासन के लिए किस प्रकार की एकता हमारे भीतर होनी चाहिए इसके लिए हम विचार-विमर्श करते हैं।

"U"= Understanding (समन्वय)

"N"= No Negativity (सकारात्मकता)

इसके पश्चात् आता है Letter "I"

"I"= Involvement (सक्रियता अर्थात् क्रीयाशीलता)

बहुत से लोगों की ऐसी विचारधारा होती है...
"जो हो रहा है, उसे होने दो ! हमें उससे क्या लेना-देना?...
भाई इस चक्कर में कौन बुरा होना चाहेगा?...

कुछ बोलकर बिगाड़ने में क्या मतलब?...”

तीर्थरक्षा, धर्मरक्षा, शीलरक्षा जैसे अनेक प्रश्नों में वस्तुतः सक्रिय होने की आवश्यकता है किन्तु हम वहाँ केवल सम्बन्ध, अपनी ईमेज, स्टेटस को संभालने के चक्कर में ऐसे गम्भीर प्रश्नों पर मौन धारण करते हैं।

इस सन्दर्भ में कलिकालसर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य-जी के द्वारा स्पष्ट शब्दों में सूचित किया है कि,

“धर्मध्वंसे क्रियालोपे, स्वसिद्धान्तार्थ विप्लवे।
अपृष्टेनाऽपि शक्तेन, वक्तव्यं तन्निषेधितुम् ॥”

अर्थात्- धर्मध्वंस, क्रियालोप, स्वसिद्धान्त का नाश... इस प्रकार की परिस्थिति प्रकट हो जाती है तो किसी की इजाजत के बिना, किसी को भी बिना पूछे ही स्वयं सक्रिय होकर उस परिस्थिति को स्पष्ट रूप में, स्पष्ट एवं प्रखर शब्दों में रोकना सत्पुरुषों का दायित्व बनता है।

पूर्व समय में भी राजा, महाराजा के दरबार में जैन मन्त्री सक्रिय थे। कल्पक से लेकर श्रीयक तक नन्द राजा के नौं-नौं मन्त्री थे। तदोपरान्त मन्त्रीश्वर पेथडशा, मन्त्रीश्वर वस्तुपाल-तेजपाल, मन्त्रीश्वर उदयन, सज्जन मन्त्री, बाहड मन्त्री वग़ैरह... वग़ैरह...

इन मन्त्रीश्वरों के सक्रियता के कारण ही शासन पर संकट नहीं आए थे शेष अन्यत्र जहाँ-जहाँ जैन मंत्री नहीं थे वहाँ एक के पश्चात एक ऐसे अनेक संकट बारंबार आए हैं।

वास्तविकता तो सच में ऐसी है कि,

दुर्जनों की सक्रियता और सज्जनों की निष्क्रियता के कारण ही देश-धर्म को अत्यन्त हानि पहुँची है।

“महाभारत का सर्जन क्युं हुआ?

केवल दुर्योधन या दुःशासन के अधमता, पापों की वजह से नहीं किन्तु...

द्रोणाचार्य एवं भीष्म जैसे महारथियों के मौन धारण करना भी इसके लिए कारणभूत है।

रामायण का सर्जन क्युँ हुआ?

केवल रावण के वासनारूपी पाप की वजह से नहीं किन्तु...

कुम्भकर्ण जैसे भाई के द्वारा उसे रोका न जाना यह भी उतना ही महत्त्वपूर्ण कारण था।”

भारत देश में करोड़ों हिन्दू (हिन्दू अर्थात् वैदिक सनातन, जैन, बौद्ध आदि धर्मी) होने के पश्चात भी इस देश में विधर्मीओं ने इस देश की आर्थिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक आदि परंपरा एवं धरोहर का अत्याधिक रूप में लाभ उठाया। सैकड़ों वर्षों तक उन्होंने हम पर हुकूमत भी चलायी।

इस घटना के अनेक कारणों में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि हमारे देशवासीओं की निष्क्रियता...!

विधर्मीओं के आक्रमण के समय मात्र शूरवीर राजपूत लड़ें, दूसरे बाकी के हिन्दू केवल तमाशा देखते रहें।

यदि करोड़ों हिन्दू उस समय हाथ में तलवार लेकर खड़े हो गए होते तो किसी मुस्लिम या क्रिश्चियन की हिम्मत नहीं होती कि इस देश की एक इंच जमीन पर भी पैर रख सकें।

बद्-नसीबी यह है कि उस समय हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें और उस वजह से इस देश को बहुत कुछ सहन करना पड़ा।

इसलिए भूतकाल से बोध लेकर अर्थात् निश्चित रूप से यह संकल्प करना चाहिए कि "मैं शासन के लिए पूर्णरूप से क्रियाशील बनूँगा, शासन की किसी भी बातों की शिकायत नहीं करूँगा।"

देहरासर में सामग्री इतरत्र अस्तव्यस्त पड़ी हुई दिखाई दे तो ट्रस्टी या पुजारी को अनाब-शनाब बोलने के बदले स्वयं उस सामग्री को व्यवस्थित स्थान पर रखने का प्रयोजन करूँगा। आयंबिल शाला, पाठशाला, उपाश्रय, तीर्थस्थान इत्यादि स्थानों पर जहाँ आपको अयोग्य लगे, जहाँ शिकायत करने जैसा लगे वहाँ स्वयं उस समस्या का निराकरण खोजकर उसका समाधान करने का प्रयास करना चाहिए।

किसी एक राजा ने उसकी खेती का समान रूप से बँटवारा करके अपने दोनों राजकुमारों को सौंप दिया। और उन्हें कहा कि "आप दोनों के हिस्से में आए हुए खेत में से जो अधिक अनाज उगाएगा वही मेरे राज्य का उत्तराधिकारी बनेगा।"

दोनों ही राजकुमार अधिक अनाज उत्पन्न करने के लिए अपने-अपने खेतों में बहुत मेहनत करते थे। किन्तु किसी कारणवश छोटे राजकुमार के खेत में ज्येष्ठ राजकुमार की तुलना में अधिक धान्यराशी उत्पन्न हुई।

जिज्ञासावश राजा ने छोटे राजकुमार से धान्यवृद्धि का रहस्य पूछा, तो राजकुमार ने प्रत्युत्तर में कहा,

"राजन् ! बात ऐसी है कि ज्येष्ठ भ्राता उनके खेत में काम करनेवाले मजदूरों को हमेशा आदेश देते रहते थे कि 'ऐसा करो... वैसा करो !' इसलिए वे लोग भी उनके हिस्से में आया हुआ कार्य पूरा तन झौंक कर करते थे लेकिन उनका मन उस काम में नहीं होता था। मैंने भी कार्य उसी प्रकार किया किन्तु मैं अपने मजदूरों को आदेश इस प्रकार देता था कि 'चलो हम ये करते हैं... वो करते हैं !' और ऐसा कहते हुए मैं स्वयं उनके साथ काम करता था जिससे वे मजदूर अपने तन के साथ मन को झौंक कर काम करते थे और यही वह रहस्य है जिससे मेरी खेती में अनाज की वृद्धि ज्येष्ठ भ्राता से अधिक हुई है।"

यह प्रसंग हम सभी को अत्यन्त सुन्दर सीख एवं

बोध देता है कि यदि हमें किसी प्रयोजन का परिणाम उत्कृष्ट चाहिए तो उस प्रयोजन में हमारा स्वयं का "Involvement" आवश्यक है।

सरकार हो या संघ... जहाँ पर आपको कुछ ठीक नहीं लगता है तो आप स्वयं उस system में हस्तक्षेप करें, उस system का हिस्सा बनकर उसे सुधारने का प्रयत्न करें। आपका involvement बढ़ेगा तो जिस परिवर्तन की अपेक्षा आप रख रहे थे वह आपके हाथों से अपनेआप ही हो जाएगा।

सम्पत्तिदान से समयदान अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है।

आप CA हो, Doctor हो, Advocate हो, Politician हो... आपने आपके जीवन में जो भी मुकाम हासिल किया है उसका शासन के कार्य हेतु सदुपयोग करें !

आप स्वयं जाकर शासन के लिए समय दें !

यदि प्रत्येक जैन अपने Skills, Knowledge एवं Arts के द्वारा शासन की सेवा करें तो जिन-शासन के करोड़ों रुपयों जो अनावश्यक रूप से बर्बाद हो जाते हैं वह बच जाएंगे।

अन्त में...,

शासन की सेवा करने का सद्भाग्य सभी को प्राप्त नहीं होता है इसलिए समय, प्रतिष्ठा, सम्पत्ति का उपयोग स्वयं को फ़रियादी के रूप में प्रस्तुत करने में नहीं अपितु सद्भागी बनने के प्रयोजन में लगाएँ !

इसलिए शास्त्रों में भी कहा है...

"क्रियावान् सः पण्डितः ॥"

INVOLVEMENT

Last Seen :

"हे प्रभु !

आप मुझे जिनशासन का 'जटायु' बना दें !

ताकि मैं मेरी शक्ति-सामर्थ्य का विचार
न करते हुए जिनशासन की रक्षा हेतु
अपने प्राणों की आहूति
हर्षोल्लास के साथ दे सकूँ !"

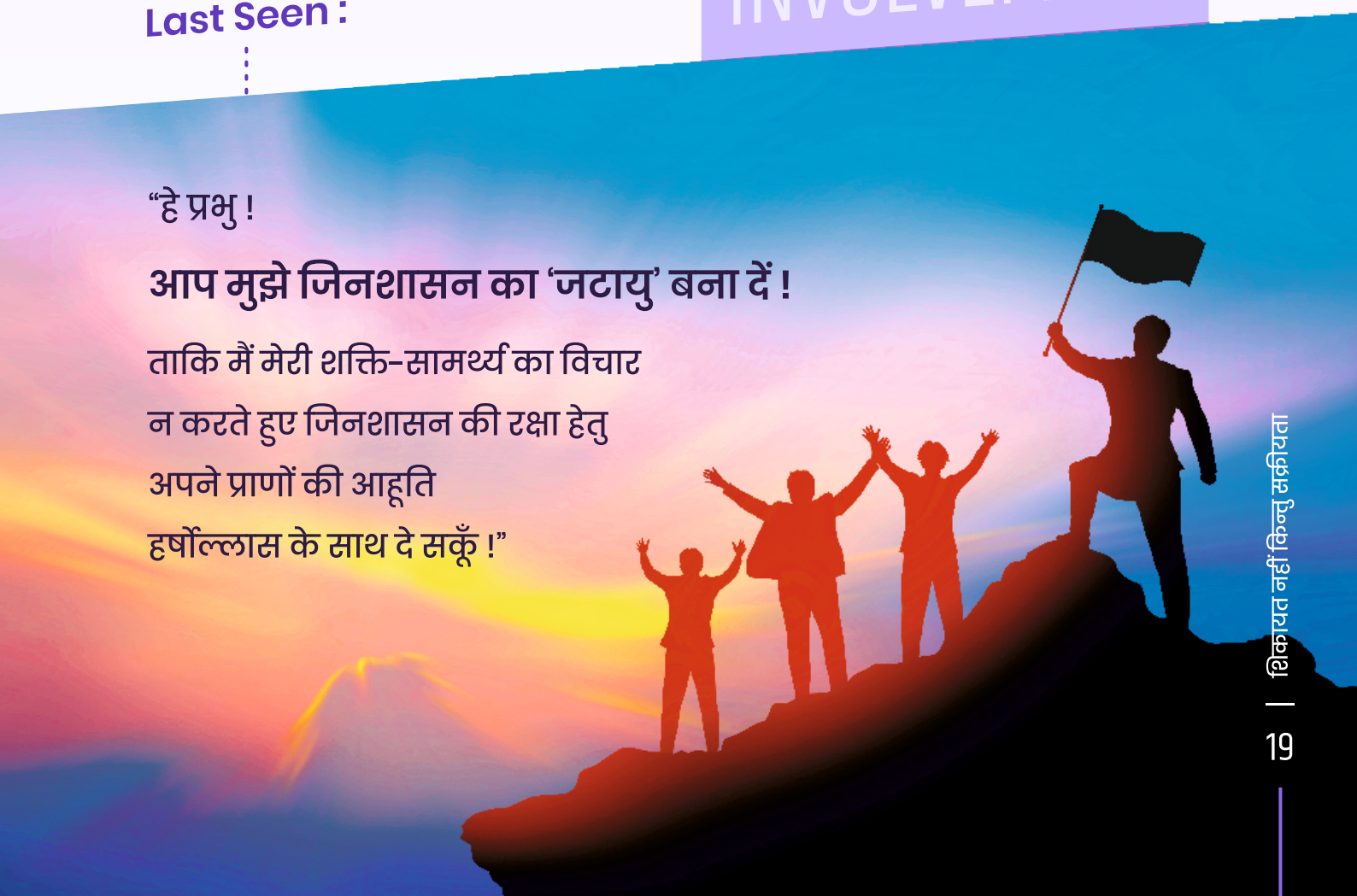

चल मेरे दोस्त! थोड़ा सा झुक जाते है...

पूज्य मुनिराज श्री तीर्थबोधि विजयजी म.सा.

Hello Friends!

अरिहंत बनने के बीस कदमों की बात हम कर रहे है। यूं देखे तो अरिहंत बनना बहुत मुश्किल है, और यूं देखे तो अरिहंत बनना बड़ा ही आसान है।

आज हम ऐसे पड़ाव के बारे में जानेंगे, जो हमें अरिहंत बना सकता है, वह है विनय। विनय का अर्थ होता है - झुकना। एक हिन्दी कविता में कहा है कि,

"झुकता है वह जिसमें जान है,
अक्कडता तो खास मुर्दों की पहचान है।"

अगर भगवान बनना इतना आसान हो, विनय से यदि भगवान बना जाए, तो हमें झुकने में कभी कोई हर्ज नहीं होना चाहिए।

हमारे यहाँ उत्तर भारत में एक संस्कृत श्लोक पढ़ा जाता है –

विद्या विनयेन शोभते।

अर्थात् विद्या-ज्ञान की शोभा विनय ही तो है। बगैर विनय के विद्या शोभा नहीं देती।

जब कि दक्षिण भारत में तो विश्व विद्यालयों में वही संस्कृत श्लोक इस प्रकार बोला जाता है –

विद्या ददाति विनयम्।

अर्थात्, विद्या का फल है विनय।

कभी-कभार हमारे मन में ऐसी धारणा होती है, कि पढ़लें डीग्री लेलें, और अपने पैरो पर खड़े हो जाए, ताकि फिर जिंदगीभर किसी के सामने घुटने टेकने न पड़े। किसी के सामने सर झुकाना न पड़े।

कमाल की बात है।

पता नहीं चलता कि सिर झुकाने से हमें इतनी परहेज क्यों है? झुकने से ऐसा क्या है, जो हमने गँवा दिया? बल्कि झुकने से ही तो हमने ऐसा

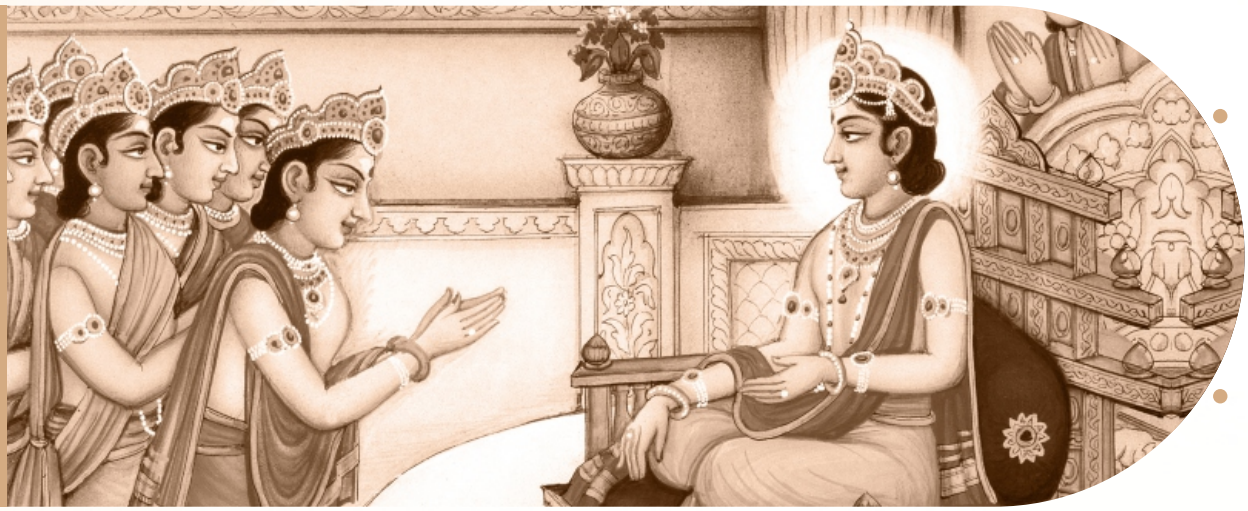

पाया है, जो कि हमारा था, और हम से दूर चला गया था।

दरअसल, अहंकार झुकने से हमें रोक लेता है। कभी-कभी मन में हो जाता है, चलो! झुक जाए, पर हमारा Ego हमें कैसा करने नहीं देता।

ऐसी ही हालत गौतमस्वामीजी की भी थी। एक-बार उन्होंने अपने अहंकार को इतना बड़ा चौड़ा कर दिया था, कि वे स्वयं प्रभु महावीरस्वामीजी को भी झुक नहीं पाए थे।

पर जब प्रतीत हो गया, कि न झुकने से नुकसान है और झुकने से ही सच्चा कल्याण है, तब वे परमात्मा को पूरे मन से झुके। और ऐसे झुके की अपना जीवन बदल दिया। न झुककर उन्होंने सिर्फ अपने मिथ्या अभिमान को ही बचा रखा था, पर झुककर उन्होंने अपने मिथ्या अहंकार को गंवाया, और उसके सामने पाया? 50,000 केवलज्ञानी शिष्यों के गुरु बने वे, अनंतलब्धिओं के भण्डार बने वे, अप्रतिम सौभाग्य के धनी बने वे, और इन सबसे बढ़कर प्रभु महावीर के दिल में हमेशा के लिए स्थान प्राप्त करनेवाले बने श्री गौतमस्वामी। अगर झुकने से इतना कुछ मिलता हो, तो भला कौन देव-गुरु के चरणों में झुकने से हिच-किचाएगा?

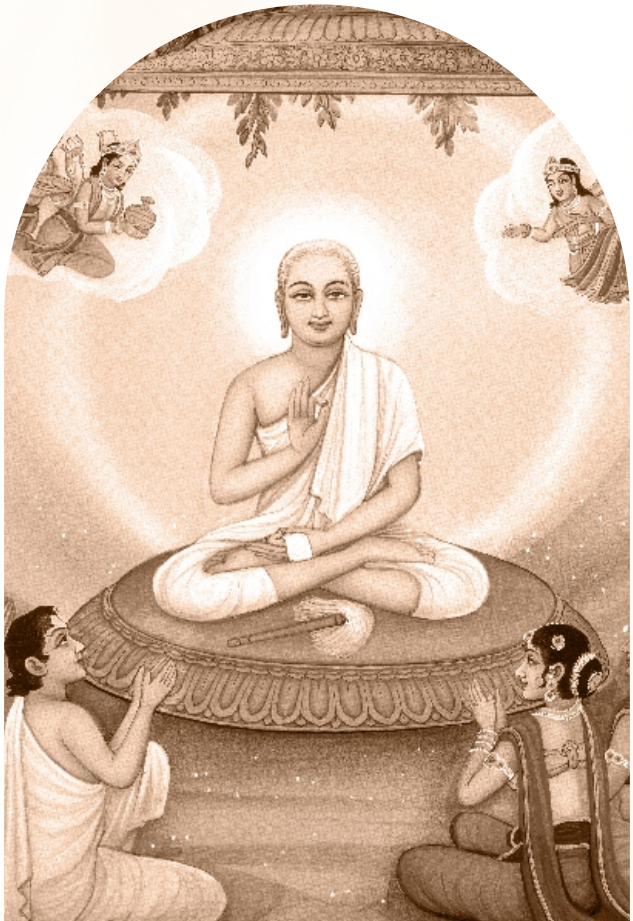

अंत में,

बड़े-बड़े साधक-संत अपनी गाड़ी खुद चलाकर मोक्ष की ओर बढ़ते है। वे बड़ी और कड़ी मेहनत करते है, और उनको झुकनेवाले कुछ ज्यादा मेहनत किए बिना ही, सिर्फ उनके साथ जुड़ जाने पर ही मोक्ष की मंजिल को प्राप्त कर लेते है। अगर मोक्ष इतनी आसानी से मिलता हो, तो चल मेरे दोस्त! थोड़ा सा झुक जाते है...

॥ विनय पद॥

(तुझे देख देख...)

जब मैं विनय से नमता,
तब कितना अच्छा लगता;
अक्कडता मुर्दा रखता, जिंदा हमेशा झुकता;
विनय धर्मनगर का द्वार; अब मोहे तार,
भवपार उतार, संसार पार करा...

मोक्षनगर की डगर, विनय से मिलती;
पूज्यों के विनय से, सब शक्तियाँ खिलती;
जो जितना नीचे झुकता, वो उतना उपर ऊठता;
विनय सर्वगुणों का सार... अब... 1॥

विनय साथी है, विनय सखा भ्राता;
बुराइयों में घिरे, विनय है त्राता;
मुझको बचा ले अब, सुख दिला दे सब;
मैं तुझे करता सदा प्रणाम... अब... 2॥

क्या क्या न देता तू, तुझे जो दिल में रखता;
इस भव में अगले, भव में भी सब देता;
अरिहंत बनने की, मुझ पर कृपा कराना;
इतनी है मेरी प्रार्थना... अब... 3॥

Think Beyond

घर में किसे आमंत्रण देना है?
समृद्धि? सफलता? या स्नेह?

पूज्य मुनिराज श्री कृपाशेखर विजयजी म.सा.

तीन लोग एक गाँव में दाखिल हुए। उन्होंने गाँव में प्रवेश करते ही पहला ही जो घर आया, उसके आंगन में खड़े होकर आवाज लगायी। सज्जन जैसे दिखनेवाले उन तीन लोगों के आवाज को सुनकर एक स्त्री बाहर आयी। उसने उनका स्वागत किया और कहाँ कि, "आप अंदर आइये। दोपहर का भोजन लेकर ही जाना।"

उन तीनों ने कहाँ कि - 'हकीकत में हम भोजन की आशा लेकर ही आपके आंगन आये है।'

उस स्त्री ने कहाँ कि, 'अतिथि तो भगवान का रूप कहलाता है। मैं वैसे भी आपको बिना भोजन किए जाने ही नहीं देती!'

उन तीनों लोगों ने उस स्त्री को कहाँ कि, 'हम तीनों की एक प्रतिज्ञा है कि, किसी भी एक घर में हम तीनों एक साथ भोजन करने नहीं जायेंगे। कोई भी एक घर में हम तीनों में से केवल एक ही भोजन कर सकेगा।'

उस महिला ने कहाँ, 'मैं समझी नहीं कि, आपने ऐसी प्रतिज्ञा क्यों की है?'

तीनों में से एक इंसान ने कहाँ कि, "देखो बहन! मैं समृद्धि हूँ। दूसरा इंसान सफलता है और तीसरा इंसान प्रेम है। अब हम तीनों में से कोई एक ही इंसान आपके घर में खाना खा सकेगा। तुम्हें पसंद करना है कि, तुम्हें किसे घर में आने का आमंत्रण देना है?"

वह स्त्री परेशानी में पड़ गई, सोचकर कहाँ कि - 'ऐसा ही है तो मैं प्रेम को ही मेरे घर में आने का आमंत्रण दूंगी।'

वे तीनों लोग हँस पड़े। प्रेम महिला के घर के दरवाजे की और मुँड़ा। उसके साथ दूसरे दोनों लोग भी उसके साथ चलो।

उस स्त्री ने कहाँ कि - 'मैंने तो सिर्फ प्रेम को मेरे घर में भोजन करने का आमंत्रण दिया है, आप दोनों क्यूं साथ में आ रहे हो?'

तब समृद्धि और सफलता रूपी इंसानो ने कहाँ, देखो बहन! आपने समृद्धि और सफलता को आमंत्रण दिया होता तो बाकी के दोनों जन बाहर ही बैठे रहते, पर आपने प्रेम को बुला दिया है। और हम प्रेम को कभी अकेला नहीं छोड़ते है। वो जहाँ जाता है, हम वही उसके साथ ही चलते है।

उस महिला के घर पर प्रेम के साथ-साथ समृद्धि और सफलता ने भी प्रवेश कर लिया। वो बहन खुश-खुशहाल हो गई।

सवाल अब हमारा है - हमारे घर में-हृदयघर में प्रवेश किसे देना है? समृद्धि और सफलता को प्रवेश देंगे तो क्षणिक आनंद मिलेगा, जबकि प्रेम और स्नेह को प्रवेश देंगे तो दीर्घजीवी आनंद मिलेगा!

प्रेम की अनेक व्याख्याओं में से एक व्याख्या- यानी :

'दूसरों की भूल को माफ करने की ताकत यानी प्रेम।'

"जीव धिक्कार से कभी भी सुख की अनुभूति नहीं होती है।
जीव सत्कार से ही सुख की अनुभूति होती है"

चलो, हम संकल्प करते है कि –

"आज मैं किसी एक व्यक्ति की भूल को तो माफ करूँगा ही।"

Temper : A Terror – 9

पूज्य मुनिराज श्री शीलगुण विजयजी म.सा.

(राजकुमारी रत्नमंजरी के हाथों में पत्र सौंपकर मित्रानंद पुनः वेश्या के घर लौट आया और तत्पश्चात आगे क्या होता है पढ़िए)

चढ़ा हुआ मुंह लेकर राजद्वार का द्वारपाल राजा की सभा में दाखिल हुआ।

"क्या समाचार है द्वारपाल? क्यों इस तरह मुंह लटकाकर खड़ा है?" द्वारपाल की ओर विचित्र नजरो से देखा।

"प्राणेश्वर! एक विचित्र विदेशी पुरुष द्वार पर खड़ा रहकर डाकिनी–शकिनियों की बाते करता है। और कहता है की, अवन्ति में न्याय करनेवाले जिंदा है की नहीं? उसे न्याय चाहिए। पर, उसकी ज़बान बहुत कड़वी है। उसके शब्द सुनकर मैं त्रस्त हो गया हूँ, इसलिए..."

"उसे अंदर भेज" राजा ने आज्ञा फरमायी। द्वारपाल झुककर बाहर गया। और साथ में एक सशक्त पुरुष को अंदर ले आया। उसकी चाल राजपुरुष के जैसी थी। वह आकर राजा के सामने झुका।

"जगदाधार! प्रजावत्सल! शत्रुत्रासक! मित्र-रक्षक!..." 15-20 विशेषणों से बाहर से आये हुए पुरुष ने शब्दों से राजा को सम्मानित किया।

"क्या हुआ उत्तमपुरुष? हमारा द्वारपाल कह रहा था कि आपको न्याय चाहिये? किस चीज का न्याय?" जिज्ञासा से राजा ने पूछा।

"धरानाथ! आपका शासन अखंडित चलता है। तो भी शर्म की बात है कि आपके ही नगर के सेठ मुझे मेरे हक के 500 दीनार नहीं दे रहे है। यदि आपके राज्य में अंधेर है तो मैच किसके द्वार पर जाऊँ? आप ही इस बात का न्याय करो।" राजा सामने खड़े पुरुष की वाक्छटा से प्रभावित हुआ।

"मंत्रीश्वर! यह बात सच है?" मंत्रीश्वर के सामने राजा ने देखा। "शायद हो सकती है... हम सेठ को बुलाकर हकीकत जान लेते है।"

राजा ने अपने सेवकों को इशारा किया। राजा के आदमी सेठ को बुलाने के लिए निकल पड़े।

महोत्सव जैसी भीड़ राजसभा में लगी थी। सेठ ने राजा के सेवकों के साथ राजसभा में प्रवेश किया। सेठ ने मित्रानन्द और वहां खड़े रहे पुरुष की और देखा। वह सब समझ गया।

राजा और विदेशी पुरुष के बीच सेठ के आने से पहले तक बहुत सारी देश-विदेश की बातें चली थी। विदेशी पुरुष की विद्वत्ता और विचक्षणता देखकर सभाजनों भी आश्चर्य में पड़ गए थे।

“मित्रानन्द!” राजा ने विदेशी को नाम से बुलाया।

“यही है वह सेठ?” मित्रानन्द ने सेठ के सामने देखकर ‘हां' कहाँ।

“सेठजी! मित्रानन्द कहता है कि आपको उसे 500 दीनार देने के बाकी है, और आप पैसे देने को तैयार नहीं है... क्या यह बात सच है?” पूरी सभा ने सेठ के सामने देखा। सेठ थरथराने लगा। उसके गले की हड्डी मुश्किल से थूक निगलती हुई दिखाई दी।

“प्राणनाथ!” अपनी शक्ति एकत्रित करके सेठ बोला, "मेरे देने के बाकी है। पर मैं वो देने ही वाला था।... देखिये 500 दीनार मेरे बटवे में ही है।" सेठ ने बटवा निकाला।

“आपको देने में विलंब क्यूं हुआ?” राजा की लालघूम आँखें सेठ के ऊपर ही थी।

“प्राणनाथ! जैसे कि आपको पता है कि अभी मेरे पिताजी का स्वर्गवास हुआ है।" सेठ रो रहे है, ऐसे सभी को लगा। "और उसी वजह से बहुत सारे लोग मिलने आते है। मुझे... मुझे एक समय की भी फुरसत नहीं है, इसीलिए... इसीलिए प्राणनाथ!" सेठ के ऊपर राजा को दया आ गयी।

“ठीक है... आप इसे पैसे चूका दो। राजा आपके दुःख से दिलगीर है।” सेठ की बात को सच मानकर राजाने उसे माफ किया। मित्रानन्द के हाथ में पैसे रखकर, उसे गुस्से से देखकर सेठ वहाँ से निकल गए।

मित्रानन्द भी ‘धन्यवाद’ कहकर राजसभा से निकल ही रहा था, कि राजा ने आवाज लगाई, ‘मित्रानन्द...’ मित्रानन्द की आँखों में चमक छा गई। मित्रानन्द वापस आया।

समुद्र में हो रही बरसात की तरह प्रहर घटिका में रेत के कण नीचे गिरते जा रहे थे। सभा को विसर्जित करके राजा के गुप्तखंड में राजा और मित्रानन्द बैठे हुए थे। राजा मित्रानन्द के पराक्रम की बातें सुनकर अति चकित हो गए थे।

“पर मित्रानन्द! हमारे राज्य को पिछले कई समय से परेशान कर रही, मृतक को खानेवाली मारी से तूने मृतक की रक्षा किस तरह की?" राजा ने आखिर में अपनी जिज्ञासा प्रकट की।

“महाराज! यह तो बहुत लम्बी कथा है।”

मित्रानन्द जैसे कि अतीत में खो गया हो, ऐसा लग रहा था।

"प्राणनाथ! उस भयानक डरावनी रात की बात ही अलग थी। वो शायद मेरे सत्व की परीक्षा की रात थी।

महाराज! आपके राज्य की सारी हवेलीयों के द्वार शाम होने के पहले ही बंध हो गए थे। जैसे कि स्मशान हो ऐसा सुनकार राज्यमार्ग पर छाया हुआ था। तभी ही मुझे दक्षिण दिशा से एक के बाद एक विचित्र कपड़ों में सज्ज, वीभत्स चेहरेवाले, बड़े नाकवाले भूत दिखे।

तभी ही उत्तर दिशा से आवाज आयी। मैंने उस तरफ देखा, एक बड़ी आँखवाली, विकराल, हड्डियाँ कँपानेवाली ड़ाकिनी मुझे दिखाई दी। उसके दाँत बहुत विचित्र थे।

पूर्व दिशा में आग लगी हो ऐसा मुझे लग रहा था। वहां मैंने देखा तो वेताल आग छोड़-छोड़कर हंस रहे थे। उनके पैर बहुत रंग-बिरंगे थे। उसके ऊपर बालो के झुंड लटक रहे थे।

अस्ताचल दिशा की तो बात ही नहीं हो सकती। वहाँ तो खविस जैसे लंबे राक्षस धम-धम करते हुए आ रहे थे। मैं चारों और से शस्त्रधारियों से घिर चूका था।

हमारा घोर युद्ध प्रारंभ हुआ। 3 प्रहर तक मैं उन व्यंतरों के आक्रमण को निष्फल करता रहा। वे सभी मेरे गुरु द्वारा दिए गये हुए प्रभावशाली मंत्रों से नष्ट हो गए। मैं मेरी आग से जलती हुई तलवार के बल पर खड़ा था। और वो ही मुझे चौथे प्रहर में एक अबला दिखी, उसका स्वरुप बहुत विचित्र था।

उसका पूरा शरीर दिव्य सफ़ेद वस्त्र से आच्छादित था। उसका रूप तो रंभा जैसा था। उसके मुंह से आग निकल रही थी। और इसलिए कराल लग रही थी। उसके हाथ में कातर थी।

"अय मित्रानन्द! क्या यहाँ पर खड़ा है? यहाँ से चला जा। नहीं तो आज..." उसने अपने दाँत कचकचाये। मुझे पता चल गया की यही 'मारी' है। मैं दृढ़ता से मृतक के पास ही खड़ा रहा।

उसकी आँखों में गुस्से की ज्वाला दिखाई दी। उसने मेरे पर आग की उल्टी की। मेरी तलवार पर मैंने उसे झेल ली। फिर हमारा घोर संग्राम हुआ। मारी को पता चल गया कि मैं अजेय था। और सुबह भी होनेवाली थी, इसलिए उसने भागने का प्रयत्न किया।

मैंने उसका हाथ मरोड़ दिया और उसके हाथ पर से कड़ा खींच लिया। वह छूटने का प्रयास करते हुए भागी। मैंने उसे मारने के लिए छुरी निकाली। उसका हाथ मेरे हाथ से छूट गया। मैंने छुरी चलायी। उसकी बायी जांघ पर घाव करके यह छुरी मेरे हाथ में ही रह गई। वो वहाँ से गायब हो गयी।" राजा के मन में मित्रानन्द की घटना सुनकर रोमांच भर गया। उनके चेहरे पर विस्मय छा गया।

"बहुत आश्चर्यकारी कार्य किया तूने... पर..." मित्रानन्द की ओर राजा की दृष्टि थी।

"वो कड़ा तू मुझे दिखा सकता है?" राजा ने बात की सत्यता को तपासने के लिए दाव फेंका। मित्रानन्द ने अपने अंगवस्त्र से कड़ा निकाला। राजा के हाथ में मित्रानन्द ने वह कड़ा दिया। राजा ने चारों और कड़े को घुमा-घुमाकर देखा। राजा की आँखें चिह्न देखकर विस्फारित हो गई।

तूफान जैसे विचार राजा के मस्तिष्क में मंडरा रहे थे। "यह मित्रानन्द की बात सच नहीं हो सकती... यह कड़ा तो रत्नमंजरी..." राजा देह चिन्ता के

बहाने कड़े के हकीकत की जांच करने के लिए राजखंड से उठकर बाहर निकले।

वह सीधा कन्यावास तरफ गये। राजा के गुप्तखंड से सातों हवेली में जाने का रास्ता निकलता था। राजा द्रुतगति से चलने लगा।

"यह नहीं हो सकता... मेरी बेटी... मेरी..." वह 7वें महल के घर पर पहुँचा। चौकीदार वहाँ खड़ा हो

गया था। राजा सरसराता अंदर घुस गया।

वह एक-एक करके सारे खंड़ को पार करता गया। सारे खंड़ के पीछे ऊपर जाने की सीढ़ियां चढ़ने लगा।

राजकुमारी रत्नमंजरी का खंड सबसे ऊपर की मंजिल पर था। राजा का हृदय जोर-जोर से धड़कने लगा। रत्नमंजरी का खंड आया, वह बंध था। राजा ने धीरे से द्वार खोला।

अंदर अंधेरा होने से राजा को कुछ भी दिखाई नहीं दिया। दीया का मद्धिम प्रकाश खंड के आगे के हिस्से में फैल रहा था। रत्नमंजरी पहली नज़र में नहीं दिखाई दी। राजा ने ध्यान से देखा। खंड का परदा झुल रहा था। राजा की दृष्टि पलंग पर गई।

रत्नमंजरी के खर्राटे राजा को सुनाई दिये।

सर पर वज्र गिरा हो, ऐसी अनुभूति राजा को हुई। खुद से कोई आवाज ना हो जाये इसलिए राजा मुंह पर हाथ रखकर खंड से बाहर निकल गया। उसने खंड का दरवाजा बाहर से बंध कर दिया।

राजा को अपनी आँखों पर यकीन नहीं हो रहा था। उसकी शंका सच साबित हुई थी। 'मारी' दूसरी कोई नहीं, पर, पर... राजा आगे सोच नहीं पाता था।

अंधेरे में उसे मित्रानन्द ने कही हुई दोनों बातों का यकीन हो गया था। रत्नमंजरी के हाथ का कड़ा गायब था। राजा दूसरा चिह्न रत्नमंजरी में ना दिखे उसके लिए भगवन को प्रार्थना कर रहा था। और वही उसकी नजर रत्नमंजरी की बायी जांघ पर नज़र गयी।

वहाँ उसने सफेद घाव को ढ़कनेवाले कपड़े को देखा। उसकी आँखें इस हकीकत को देखने के लिए तैयार ही नहीं थी।

"क्या करें? किसे निवेदन करें? जब अपने ही घर में ही पाप होगा, तो किसे क्या कह सकते है?" राजा की संपूर्ण शक्ति क्षीण हो गई। वह नीचे बैठ गया।

उसका मस्तिष्क शून्यमनस्क हो गया।

"भगवान! अब तूं ही कोई रास्ता बता... यह मेरे कुल पर जो कलंक लगा है उसे मिटा। कुछ देर तक वह वैसे ही नीचे बैठा रहा। फिर वहां से खड़ा हो गया।

एक अटल निर्णय ने उसके दिमाग में आकार ले लिया।

(क्रमशः)

प्रभु के वरसीदान का महिमा

जैन प्रोफेसर तन्मयभाई एल. शाह

24 तीर्थंकर परमात्मा दीक्षा लेने से पहले 1 वर्ष तक हर रोज दान देते है, उसे वर्षीदान कहते है। प्रभु के वर्षीदान का भी जबरदस्त प्रभाव है।

चार ग्रंथ से भी ज्यादा ग्रंथों से मिली हुई जानकारियां को एकत्र करके यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ। जिन्हें इन सारी बातों के लिए शास्त्रोक्त आधार चाहिए हो उनको वैराग्यमंजरी-उपदेशप्रासाद तथा प्रभुजी के संवत्सरीदान का स्तवन, पूजा की ढाल आदि देख लेना चाहिए।

प्रभु 1 वर्ष तक हर रोज सूर्योदय के 1 प्रहर बीतने के बाद दो प्रहर तक दान के लिए आ रहे भविजन को दान देते है।

इस 1 वर्ष के वर्षीदान के द्वारा प्रभु अपना मार्ग मंगलमय बने और श्री जिनशासन का त्यागमार्ग लोक हृदय में प्रतिष्ठित किया जाता है।

प्रभु के पिता के द्वारा चार द्वारवाली एक बड़ी दानशाला बनाई जाती है। कुल 4 दानशालाएँ खोली जाती है।

पहले में भोजन, दूसरे में वस्त्र, तीसरे में अलंकार और चौथे में नगद धन दिया जाता है। यह चारों चीजें हर एक को उसकी इच्छा के मुताबिक दी जाती है। और वो भी सूर्योदय के बाद 1 प्रहर से लेकर दो प्रहर तक भव्यजीवों को दी जाती है।

इन्द्र की आज्ञा से कुबेर लोकपाल आठ क्षणों में 16 मास/प्रमाण सुवर्णमुद्रा सिक्के तैयार करता है, जो प्रभु के माता-पिता के नाम से अंकित होते है।

1 सुवर्णमुद्रा का वजन 80 रति होता है। 40 मन के नाप का 1 गाड़ा भर जाये ऐसे 225 गाड़े के जितना दान रोज देते है। हर रोज 9000 मन सोना दान में देते है।

नाप : 80 रति = 1 सुवर्णमुद्रा, 96 रति = 1 तोला, छः सुवर्णमुद्रा = 5 तोला, 48 सुवर्णमुद्रा = 40 रतल, 1920 सुवर्णमुद्रा = 1 मन और 10,80,000 सुवर्णमुद्रा = 5625 मन, 4800 सुवर्णमुद्रा = 25 मन, पूरे वर्ष में 81 हजार बैलगाड़ा प्रमाण वर्षीदान होता है।

1 वर्ष की कुल 388 करोड़, 80 लाख सुवर्णमुद्रा का वजन होता है = 32 लाख, 40 हजार मन। रोज की 1 करोड़ 8 लाख तो मात्र सुवर्णमुद्राएं ही देते है। उसके अलावा दूसरा सभी भी बहुत सारा देते है। सुवर्ण के साथ अन्य बहुत सारी वस्तुएं भी देते है। यह बात श्री पार्श्वनाथ चरित्र में लिखी गई है। उसमें कुछ लोगों को नगर, पतन, मडंब, गाँव, निवास आदि दिये। तो कई लोगों को हार, मणि, मुकुट, कटक, बाजूबंद आदि आभूषण दिये। और कुछ लोगों को मदोन्मत्त हाथी, रथ और श्रेष्ठ अश्व दिये, कुछ लोगों को रेशमी दुकुल आदि उत्तम-वस्त्र दिये। कुछ लोगों को मोती, नीलम, महा-नीलम, माणेक आदि रत्न दिये। लोग जो जो वस्तुएं चाहते थे, वह हर एक वस्तु का दान प्रभु ने किया। पूरे जगत को ऋणमुक्त किया। किसी को किसी का भी कर्ज चुकाने का बाकी न रहा।

'ते उरण सवि पृथ्वी करी, धन वरसी वरसी दाने रे'

और

'वरसीदान देई तुम जगमें ईल थी ईति निवारी'

(स्तवनों मे से)

गिनकर दिये जाये वैसे श्रीफल आदि दिये, तोलकर दिये जाये वैसे गुड़, शक्कर आदि दिये। नाप के दिये जाये वैसे घी, तेल आदि दिये,

देखकर दिये जाये वैसे हीरे-माणेक के दान दिये।

ऐसा यह प्रभु का वर्षीदान की जिसकी संख्या, नाप, पदार्थ आदि ऊपर देखा। अब वर्षीदान के पूर्व में लेने-देने के बाद उसका प्रभाव कैसा होता है, वह भी खास जानने जैसा है। यह सभी वर्षीदान का धन प्रभु के प्रभाव से कैसे अतिशयों का सर्जन करता है, वह अब बताया जायेगा। प्रभु खुद तो प्रभावशाली है। प्रभु का दान भी प्रभावशाली।

प्रभु के सांवत्सरिकदान के भी विविध अतिशय होते है। जो प्रभु को दूसरों से उत्कृष्ट बताते है। प्रभु ने दान देने में कोई कंजूसी नहीं कि है। हर एक को अपने भाग्य के हिसाब से मिल ही जाता है। प्रभु के दान का प्रभाव ही ऐसा होता है, कि लेनेवाले के भाव पलट जाते है। अपूर्व हो जाते है। बहुत-सारा माँगने की इच्छावाला प्रभु के हाथ से दान लेते ही उसकी माँगने की इच्छा अल्प हो जाती है। प्रभु के करकमलों से जो प्राप्त हुआ उसे भी 'मुझे बहुत प्राप्त हुआ' यह मानकर प्रसन्न होते है। इस-लिए प्रभु कम देते है ऐसा नहीं मान सकते। नाप-तोल के देते है, ऐसा भी नहीं कह सकते। इसमें तो और भी बहुत सारे अतिशय होते है। इसलिए धन प्राप्त करने के सिवा के और भी अनेक फायदे भी होते है। भगवान के वर्षीदान के इस कार्य में सभी इन्द्र भी जुड़ जाते है। और वर्षीदान लेते भी है। उनको भी उसके फायदे होते है।

भवनपति देव :
पूरे भारत देश में वर्षीदान इच्छुक भव्यजीवों को स्वस्थान से लेकर आते है।

व्यंतर देव : वर्षीदान लेनेवालों को निर्विघ्न पहुँचाते है।

ज्योतिष देव : विद्याधरों को लाकर प्रभु समक्ष दान दिलवाने का कार्य करते है।

सौधर्मेन्द्र : कोषाध्यक्ष बनकर भंडार में से धन निकालते है, प्रभु के दाहिने हाथ में महाशक्ति को स्थापित करते है कि जिससे प्रभु को जरा-सा भी खेद नहीं होता। प्रभु अनंतवीर्यवान होने पर भी बस भक्तिभाव से यह सब करते है।

चमरेन्द्र : इच्छुक भाग्यशाली के भाग्य के मुताबिक दान के लिए प्रभु के हाथ में अंजलि भरते है।

बलीन्द्र : लेनेवालों के भाग्य से अधिक अंजलि में भरे हुए धन को निकाल लेते है।

ईशानेन्द्र : याचक को धनराशि के पास खड़े रह-कर बुलाता है। जो प्रभु को बिनती करते है, उन्हें प्रभु के हाथ से दान दिलाता है। याचक भाग्य के हिसाब से याचना करते है। और दान की

इस क्रिया में परेशान करनेवालों को रत्नजड़ित दंड से कूटकर दूर करते है।

इसमें कहीं भी अनुकंपादान की बुद्धि नहीं है, यह तो प्रीतीदान है, धर्मप्रभावना है। भव्य-जीवों को ही वह दान प्रभु के हाथों से मिलता है, इसलिए 64 ईन्द्र भी लेते है। सभी ही जीवों को संतोष की प्राप्ति हो जाती है। जीवन में धर्म-वृद्धि होती है। कल्याण होता है। त्रिजगत को वश करने के लिए दान यह बड़े मंत्रा-क्षर रूप है।

वर्षीदान में प्राप्त हुए सुवर्णमुद्रा आदि के प्रभाव से 64 ईन्द्रो को 2 सागरोपम तक परस्पर कलह नहीं होता है। (मंतातर से 12 वर्ष) चक्रवर्ती, वासुदेव, राजा, आदि भी वर्षीदान ले और उस सुवर्णमुद्रा को राज-भंड़ार में रख दें तो 12 वर्ष तक भंडार वर्द्धमान रहता है। बाँटने पर भी.. जरा सा भी नहीं कम होता है परन्तु साथ-साथ उनका यश 1 वर्ष तक फैलता रहता है।

वर्षीदान के प्रभाव से दान लेनेवालों के पुराने 12 वर्ष के रोगों का नाश होता है। और नये रोग 12 वर्ष तक होते नहीं है।

मंदबुद्धिवालें भी बृहस्पति समान बुद्धिशाली बन जाते है। भव्यत्व का मुद्रालेख लग जाता है।

सर्व जनों के मनवांछित कार्य सिद्ध होते है। नगरसेठ-सार्थपति अपनी यशकीर्ति बढ़ाने, सन्मान बढ़ाने के लिए प्रभुजी के पास दान लेते है।

ग्रंथो और स्तवनो आदि के आधार से यह संकलन किया है।

ऐसे प्रभावशाली प्रभु के हाथों से प्रभावशाली अतिशयवंत दान मुझे भी कब प्राप्त होगा?
सबसे महान उनके वेश का दान मुझे उनके हाथ से कब मिलेगा?
यह भावधारा में सदा मशगूल रहता हूँ।

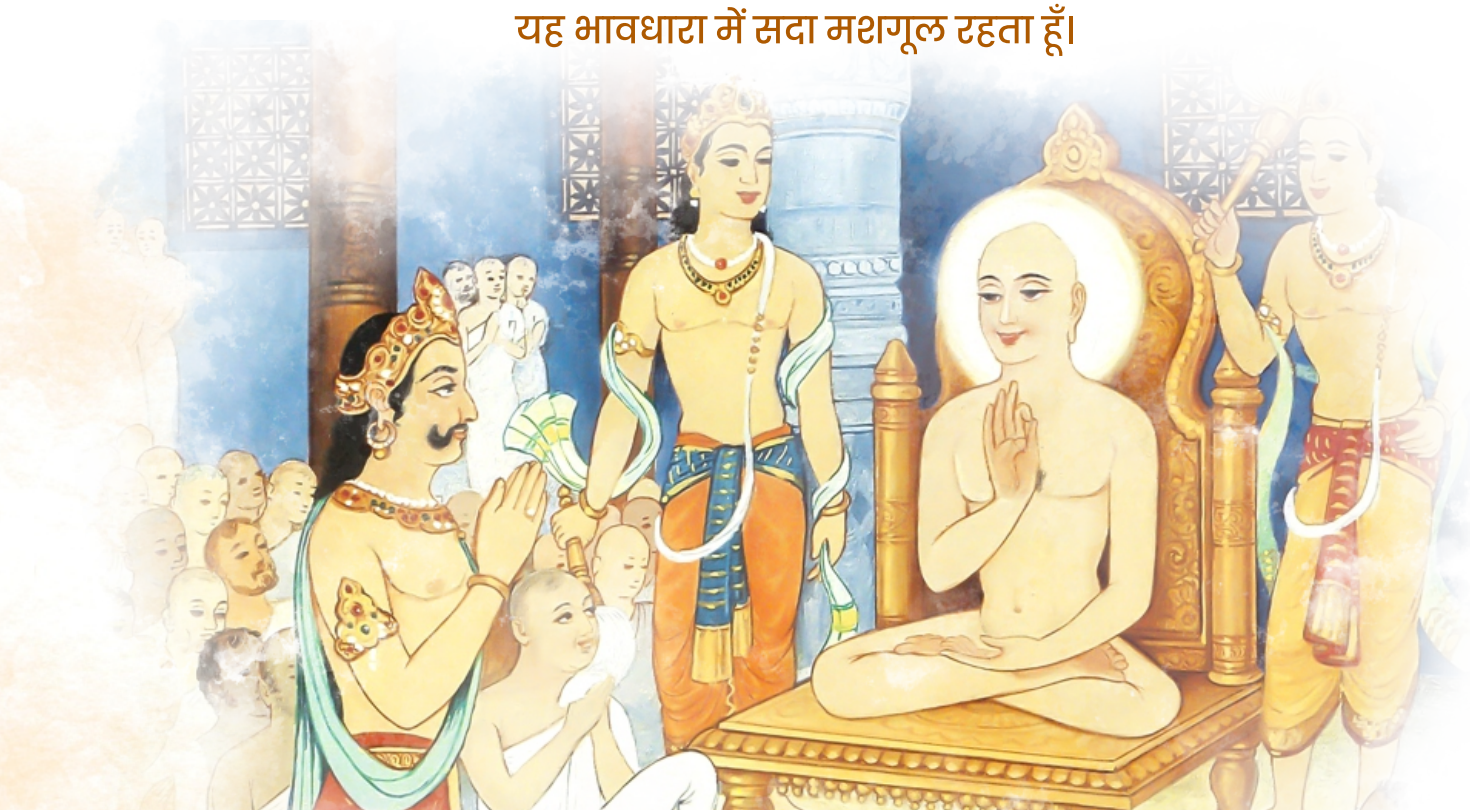

LEARNING
MAKES A MAN
PERFECT

VISIT US
www.faithbook.in
FaithbookOnline

- "Faithbook" नॉलेज बुक में साहित्यिक, धार्मिक एवं मानवीय सम्बन्धों को उजागर करने वाली कृतियों को स्थान दिया जाता है। ऐसी कृतियाँ आप भी भेज सकते हैं। चुनी हुई कृतियों को "Faithbook" नॉलेज बुक में स्थान दिया जाएगा।
- प्रकाशित लेख एवं विचारों से "Faithbook" के चयनकर्ता, प्रकाशक, निदेशक या सम्पादक सहमत हों, यह आवश्यक नहीं है।
- इस Faithbook नॉलेज बुक में वीतराग प्रभु की आज्ञा विरुद्ध का प्रकाशन हुआ हो तो अंतःकरण से त्रिविध त्रिविध मिच्छामि दुक्कडम्।

SAYYAM GRAPHICS
80878 75828 | 92704 56160